हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch

# उद्यान रश्मि

राजभाषा पत्रिका
वर्ष 13 अंक 1 (जनवरी-जून, 2012)

## अमरूद विशेषांक

भाकृअनुप
ICAR

**केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान**
रहमानखेड़ा, पो. काकोरी, लखनऊ - 226 101
ई-मेल : cish.lucknow@gmail.com
वेबसाइट : www.cishlko.org

# भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का गीत

जय जय कृषि परिषद भारत की,
सुखद प्रतीक हरित भारत की,
कृषिधन, पशुधन मानव जीवन,
दुग्ध, मत्स्य, फल, यंत्र सुवर्धन,
वैज्ञानिक विधि नव तकनीकी,
पारिस्थितिकी का संरक्षण,
सस्य-श्यामला छवि भारत की,
जय जय कृषि परिषद भारत की।

हिम प्रदेश से सागर तट तक,
मरु धरती से पूर्वोत्तर तक,
हर पथ पर है, मित्र कृषक की,
शिक्षा, शोध, प्रसार सकल तक,
आशा स्वावलंबित भारत की,
जय जय कृषि परिषद भारत की।
जय जय कृषि परिषद भारत की।।

© केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
रहमानखेड़ा, लखनऊ

संरक्षक
एच. रविशंकर
निदेशक
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
रहमानखेड़ा, लखनऊ-226 101

प्रकाशन समिति
डी. के. टंडन
धीरज शर्मा

*प्रकाशक एवं सम्पर्क सूत्र*
निदेशक
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, पोस्ट-काकोरी, लखनऊ-226 101
फोन : 0522-2841022-24, फैक्स : 0522-2841025
मीडिया संसाधन कक्ष नं. : 0522-2841082
ई-मेल : cish.lucknow@gmail.com
वेबसाइट : www.cishlko.org

# प्राक्कथन

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, लखनऊ की राजभाषा पत्रिका 'उद्यान रश्मि' का नवीनतम संस्करण आपके समक्ष एक बार पुनः प्रस्तुत है। राजभाषा पत्रिका का यह संस्करण अमरूद (*सीडियम ग्वाजावा* एल.) विशेषांक है। इस अंक में अमरूद से संबंधित सभी जानकारियों को निहित करने का प्रयास किया गया है। अमरूद यद्यपि अमेरिका के उष्ण कटिबंधीय क्षेत्र से यहाँ लाया गया है किन्तु जिस प्रकार इसे भारत में आत्मसात किया गया उससे प्रतीत होता है कि यह भारतीय मूल का ही फल है। अमरूद को गरीबों के सेब की संज्ञा भी दी जाती है। यह एक सुस्वादु एवं सुवास लिये हुए फल है जिसमें विटामिन सी की प्रचुर मात्रा होती है।

भारत में उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश आदि अमरूद के प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। यहाँ अमरूद की बागवानी लगभग 2.05 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में होती है। वर्ष 2010-11 के दौरान अमरूद का कुल उत्पादन 24.62 लाख मीट्रिक टन तथा उत्पादकता 12.0 मीट्रिक टन प्रति हेक्टेयर थी। उत्तर प्रदेश भारत का सर्वाधिक अमरूद उत्पादक राज्य है जबकि मध्य प्रदेश उत्पादकता की दृष्टि से अग्रणी राज्य है।

भारत में अमरूद की प्रमुख किस्मों में इलाहाबाद सफेदा, सरदार (एल-49), ललित एवं श्वेता हैं। ललित एवं श्वेता संस्थान द्वारा विकसित की गयी प्रजातियाँ हैं। ललित किस्म की प्रसंस्करण के क्षेत्र में अच्छी संभावनाएँ हैं। अमरूद के क्षेत्र में केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान ने किस्मों के विकास, प्रवर्धन, फसल नियमन, सघन बागवानी, कटाई-छँटाई विधि, पुराने बागों का जीर्णोद्धार, रोग एवं कीट प्रबंधन तथा तुड़ाई उपरांत प्रबंधन एवं उत्पाद तैयार करने के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उद्यान रश्मि के इस संस्करण में अमरूद से संबंधित वैज्ञानिक जानकारियों को समाहित किया गया है।

उद्यान रश्मि के इस अंक के प्रकाशन के अवसर पर मैं आशा करता हूँ कि इसमें निहित लेख बागवानों सहित सभी सहभागियों के लिये लाभकारी होंगे। संस्थान द्वारा किये गये अनुसंधान कार्यों को राजभाषा पत्रिका में सुन्दरता पूर्वक प्रकाशित किये जाने का ही परिणाम है कि उद्यान रश्मि के पिछले संस्करण को लखनऊ की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की हिन्दुस्तान ऐरोनाटिकल लिमिटेड में संपन्न हुई बैठक में 160 से अधिक कार्यालयों में दूसरा स्थान प्राप्त हुआ। इस अवसर पर मैं उम्मीद करता हूँ कि संस्थान के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा संघ की राजभाषा नीति का पालन किया जायेगा। पत्रिका के प्रकाशन अवसर पर मैं लेखकों एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सभी सदस्यों को बधाई देता हूँ।

(एच. रविशंकर)
निदेशक

# सम्पादकीय

राजभाषा पत्रिका का यह अमरूद विशेषांक पाठकों के समक्ष नूतन जानकारियों के साथ एक बार पुनः प्रस्तुत है। विज्ञान विषयक निबंधों को राजभाषा (हिन्दी) में सभी सहभागियों तक पहुँचाने में 'उद्यान रश्मि' सतत प्रयत्नशील रहा है। आज के इस वैज्ञानिक युग में भाषाओं की अपनी महत्ता है और राजभाषा (हिन्दी) ने भी व्यक्ति, समाज एवं देश को दिशा प्रदान करने में अतुलनीय योगदान दिया है। भाषा वह साधन है जो न केवल मनुष्य को आपस में जोड़ती है अपितु विज्ञान के आदान-प्रदान में भी सहायक होती है। भारत जैसे बहुभाषिक देश को एक सूत्र में पिरोने का जो कार्य हिन्दी ने किया है वह निश्चित ही प्रशंसनीय है। भाषा ही उन साधनों में से एक है जो देश को सांस्कृतिक रूप से एक करने में सहायक होती है। साथ ही हिन्दी भाषा विज्ञान के वाहक का कार्य करती रही है जिसका 'उद्यान रश्मि' एक सशक्त उदाहरण है।

संस्थान की राजभाषा पत्रिका 'उद्यान रश्मि' के इस संस्करण में स्वास्थ्य एवं पोषण के लिये अमरूद, की प्रवर्धन तकनीकें एवं उन्नत किस्में, अमरूद के बागों की स्थापना एवं रखरखाव, अमरूद की सघन एवं अतिसघन बागवानी, अमरूद के बाग में अन्तः फसलों की खेती, अमरूद के बागों में समेकित पोषण एवं जल प्रबंधन, जैविक खाद, पद्धतियाँ एवं उनका अमरूद के जैविक उत्पादन में प्रयोग अमरूद में समेकित नाशीकीट प्रबंधन, अमरूद में लगने वाले रोगों का समेकित प्रबंधन, अमरूद का तुड़ाई उपरांत प्रबंधन, भारत में अमरूद का उत्पादन एवं विपणन, अमरूद के उत्पाद एवं प्रसंस्करण एवं अमरूद का किण्वित पेय नामक लेख सम्मिलित किये गये हैं। संस्थान के वैज्ञानिक हमेशा से ही किसानों एवं बागवानों के लाभार्थ इस पत्रिका में अपना अमूल्य योगदान देते रहे हैं।

विगत संस्करणों की भाँति इस संस्करण में भी यह उद्धृत करना आवश्यक होगा कि 'उद्यान रश्मि' के पिछले संस्करण को लखनऊ की नराकास की बैठक में द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया गया। संस्थान द्वारा 'उद्यान रश्मि' के माध्यम से उन्नत कृषि तकनीकों को सभी सहभागियों तक पहुँचाने का प्रयास किया जा रहा है।

धीरज शर्मा

(धीरज शर्मा)
सहायक निदेशक (राजभाषा)

# उद्यान रश्मि

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान की राजभाषा पत्रिका

वर्ष 13 अंक 1 (जनवरी-जून) 2012


## विषय-वस्तु


स्वास्थ्य एवं पोषण के लिये अमरूद 1
*एस. राजन, नीलिमा गर्ग एवं एच. रविशंकर*

अमरूद की प्रवर्धन तकनीकें एवं उन्नत किस्में 4
*एस. राजन, एल. पी. यादव एवं रघुबीर सिंह*

अमरूद के बागों की स्थापना एवं रखरखाव 10
*घनश्याम पाण्डेय*

अमरूद की सघन एवं अतिसघन बागवानी 16
*वी.के.सिंह*

अमरूद के बाग में अन्तः फसलों की खेती 22
*सुशील कुमार शुक्ल*

अमरूद के बागों में समेकित पोषण एवं जल प्रबंधन 27
*कैलाश कुमार एवं विनोद कुमार सिंह*

जैविक खाद, पद्धतियाँ एवं उनका अमरूद के उत्पादन में प्रयोग 35
*राम अवध राम*

अमरूद में समेकित नाशीकीट प्रबंधन 40
*आर. पी. शुक्ल*

अमरूद में लगने वाले रोगों का समेकित प्रबंधन 47
*ए. के. मिश्र*

अमरूद का तुड़ाई उपरांत प्रबंधन 55
*भारती किल्लाड़ी एवं रेखा चौरसिया*

भारत में अमरूद का उत्पादन एवं विपणन 59
*डॉ. अजय वर्मा*

अमरूद के उत्पाद एवं प्रसंस्करण 64
*डी. के. टंडन एवं डी. के. शुक्ल*

अमरूद का किण्वित पेय 68
*नीलिमा गर्ग*

# स्वास्थ्य एवं पोषण के लिये अमरूद

एस. राजन[1], नीलिमा गर्ग[2] एवं एच. रविशंकर[3]
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

भारत में अमरूद को उसकी सरल संरचना, वैविध्य मृदा एवं वातावरण के अनुरूप अनुकूलनीयता तथा बहुफलदायक होने के कारण वाणिज्यिक महत्ता प्राप्त है। अमरूद की उत्पत्ति यद्यपि अमेरीका के ऊष्ण कटिबंधीय (मैक्सिको से पेरू) हिस्से में हुई किन्तु भारतीय स्थितियों में अमरूद की बागवानी से किसानों को इतना अधिक आर्थिक लाभ हुआ कि देश के सभी हिस्सों में अमरूद किचन गार्डेन में भी लगाया जा रहा है।

वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, आँध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, पंजाब, कर्नाटक, तमिलनाडु तथा उड़ीसा अमरूद के मुख्य उत्पादक राज्य हैं। अमरूद का उत्पादन उसे ताजे फल के खाने के लिये किया जाता है। किन्तु ताजे फलों का अन्तर्राष्ट्रीय बाजार काफी छोटा है। फिर भी अमरूद के जूस तथा नेक्टर, जैम तथा जैली, फल पेस्ट, सिरप आदि प्रसंस्कृत उत्पाद बाजार में उपलब्ध है। कुछ व्यापारियों की राय है कि अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में ताजे अमरूद के फलों की अच्छी संभावना है तथा जैसे-जैसे उपभोक्ता इससे परिचित होंगे, इसकी माँग धीरे-धीरे बढ़ती जायेगी।

अमरूद को कभी-कभी 'सुपर फ्रूट' की संज्ञा भी दी जाती है क्योंकि इसमें व्याप्त पौषिणक गुणों से अनेक स्वास्थ्यवर्धक लाभ होते हैं। संतरा में अनुशंसित विटामिन 'सी' की मात्रा की तुलना में इसमें चार गुना अधिक विटामिन 'सी' विद्यमान होता है। इसमें विटामिन 'ए' भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। अमरूद के बीज ओमेगा तीन तथा भोज्य फाइबर के भी अच्छे स्रोत होते हैं। इसमें पोटेशियम, लौह, फोलेट तथा कोलेस्टेरॉल कम करने वाले घुलनशील फाइबर भी होते हैं। लाल गूदा वाले अमरूद के फल लाइकोपीन के अच्छे स्रोत होते हैं। विशेषज्ञों की यह राय है कि इसमें तरबूज से भी बेहतर लाइकोपीन पाया जाता है।

लाल छिलके वाली अमरूद की प्रजातियाँ आकर्षक रंग एवं उत्तम स्वाद के कारण अत्यंत लोकप्रिय हो रही हैं। इनमें एन्थोसायनिन प्रचुर मात्रा में विद्यमान होता है जो हृदय रोगों की रोकथाम में प्रभावशाली कारक होता है। यह एल. डी. एल. कोलेस्टेरॉल के ऑक्सीकरण को कम कर रक्त प्रवाह को शक्ति प्रदान करते हैं, लाल रक्त कोशिकाओं को आपस में चिपकने से रोकते हैं, धमनियों को संकुचित होने नहीं देते हैं, रक्त वाहनियों में लचीलापन बढ़ाते हैं तथा रक्तचाप पर नियंत्रण रखते हैं। अतः अमरूद की उन प्रजातियों को विकसित करना समय की माँग है जो बाहर से लाल रंग और गुलाबी गूदे वाली हों

[1]प्रभागाध्यक्ष (फसल सुधार), [2]प्रभागाध्यक्ष (पी.एच.एम.) एवं [3]निदेशक (सी.आई.एस.एच.)

क्योंकि ये लाइकोपीन और एन्थोसायनिन से युक्त होते हैं।

- अमरूद कम कैलॉरी एवं वसा वाला फल है जिसमें विटामिन, खनिज एवं प्रतिऑक्सीकारक पॉलीफिनाल एवं फ्लेवोनाएड्स प्रचुर मात्रा में होते हैं। ये सभी कैंसर, वृद्धावस्था आदि में रूकावट उत्पन्न करते हैं और असंक्राम्य वर्धक भी होते हैं।
- इसका फल घुलनशील भोज्य रेशे (5.4 ग्राम/100 ग्राम फल) का अच्छा स्रोत है जो अच्छा मृदुरेचक भी है। फल में विद्यमान रेशा कोलोन श्लेष्मल झिल्ली को जीव विष से अनाश्रयता समय में कमी लाकर बचाता है। साथ ही कोलोन में कैंसर उत्पन्न करने वाले रासायनों को बाँधता भी है।
- अमरूद का ताजा फल प्रतिऑक्सीकारक विटामिन 'सी' का उत्तम स्रोत है। यह दैनिक अन्तर्ग्रहण अनुशंसा से तीन गुना अधिक होता है। बाहरी मोटे छिल्के में विटामिन 'सी' की मात्रा गूदे की अपेक्षा काफी ज्यादा होती है। अनुसंधान से यह ज्ञात हुआ है कि जिन फलों में विटामिन 'सी' प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहता है वे शरीर में संक्रमित रोगों से लड़ने की प्रतिरोधात्मक क्षमता बढ़ाते हैं एवं कैंसर उत्पन्न करने वाले मूलकों की सफाई करते हैं।
- शरीर में कोलाजेन संश्लेषण के लिए विटामिन 'सी' महत्वपूर्ण घटक है। कोलाजेन मुख्य संरचनात्मक प्रोटीन है जो शरीर में रक्त शिराओं, हड्डियों, अंगों एवं त्वचा की अक्षतता को बनाये रखती है।
- अमरूद विटामिन 'ए' तथा फ्लेवोनाएड्स जैसे बीटा-केरोटीन, लाइकोपीन, ल्यूटेन एवं क्रिप्टोजेन्थिन का अच्छा स्रोत है। यह यौगिक प्रतिऑक्सीकारक गुणों के कारण इष्टतम स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। विटामिन 'ए' श्लेष्मल झिल्ली एवं त्वचा को निरोग रखने के लिए जरूरी है। कैरोटीन युक्त फलों का सेवन शरीर को फेफड़े एवं मौखिक विकार कैंसर से बचाता है।
- शोध से यह भी ज्ञात हुआ है कि लाल रंग के अमरूदों में विद्यमान लाइकोपीन त्वचा को अल्ट्रा वायलट किरणों की क्षति से एवं प्रोस्टेट ग्रंथि को कैंसर से बचाता है।
- ताजे अमरूद पोटेशियम खनिज के बहुत अच्छे स्रोत हैं। इनमें प्रति 100 ग्राम केले से अधिक पोटेशियम पाया जाता है। पोटेशियम शरीर में कोशिकाओं एवं तरल पदार्थों का महत्वपूर्ण घटक है जो हृदयगति एवं रक्तचाप को नियंत्रित करने में सहायक है।
- यह विटामिन 'बी' समूह जैसे पेन्टोथेनिक एसिड, नियासिन एवं पिरीडाक्सिन, विटामिन 'ई' एवं 'के' तथा खनिज जैसे मैग्नीशियम, ताँबा एवं मैंगनीज का भी अच्छा स्रोत है। मैंगनीज प्रतिऑक्सीकारक किण्वक सुपर-ऑक्साइड डिसम्यूटेज का सहघटक है। ताँबा लाल रक्त कोशिका के उत्पादन के लिये आवश्यक है।

- लाल रंग के गूदे वाली अमरूद की किस्में प्रसंस्करण उद्योग के लिए महत्वपूर्ण हैं। लेकिन देश में यह व्यापारिक स्तर पर तब तक उपलब्ध नहीं थीं जब तक संस्थान ने ललित किस्म को विकसित नहीं किया था। यह किस्म देश के विभिन्न प्रांतों में अधिक उत्पादन क्षमता एवं लाल गूदे के कारण लोकप्रिय है। यह किस्म पेय बनाने एवं गूदे के निर्यात के लिए उपयुक्त है। अतः इसकी माँग उन क्षेत्रों में ज्यादा है जहाँ अमरूद उत्पादन प्रसंस्कृत उत्पादों के लिए होता है। केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ का उद्देश्य है लाल रंग के गूदे की किस्में विकसित करना जो खाने एवं प्रसंस्करण उद्योग दोनों के लिये ही उपयुक्त हों। अतः हमारा लक्ष्य है कि अमरूद की उन किस्मों को विकसित किया जायें जिनमें मुलायम बीज के साथ ही उचित भोज्य गुणवत्ता भी हो। संकरण द्वारा गूदे में गुलाबी रंग एवं छिल्के में लाल रंग उत्पन्न कर सन्तति तैयार की गयी हैं। ललित ज्यादा उत्पादन तो देती ही है, कटाई-छँटाई में भी अनुकूल प्रतिक्रिया देती है। देश के विभिन्न प्रांतों यथा महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तराखण्ड, राजस्थान, गुजरात एवं आँध्र प्रदेश, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, प्रगतिशील बागवानों तथा अन्य संस्थानों में ललित प्रजाति को वितरित किया गया है जो उसे गुणात्मक रूप में उत्पन्न कर प्रसार कर रही हैं।
- एक अन्य अमरूद की प्रजाति श्वेता भी संस्थान ने विकसित की है जो ज्यादा पैदावार देने के साथ ही आकर्षित रूप रंग एवं अच्छी गुणवत्तायुक्त है। यह किस्म पंजाब और महाराष्ट्र में लोकप्रिय हो रही है।

संस्थान द्वारा विकसित अमरूद की प्रजातियाँ देश के हर प्रांत में सफलता पूर्वक उपजायी जा रही हैं।

# अमरूद की प्रवर्धन तकनीकें एवं उन्नत किस्में

एस. राजन[1], एल. पी. यादव[2] एवं रघुबीर सिंह[3]
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

भेंट कलम, कलिकायन, स्टूलिंग, गूटी तथा वेज ग्राटिंग अमरूद प्रवर्धन की प्रमुख विधियाँ हैं। भेंट कलम एक प्रचलित विधि है किन्तु इसमें अनेक कमियाँ देखी गयीं हैं। कलम बाँधने के लिए मूलवृन्त को मातृ वृक्ष की सांकुर शाख के पास ले जाने में होने वाली कठिनाई एवं मातृ वृक्ष से सीमित संख्या में सांकुर शाखों की उपलब्धता के कारण वेज ग्राटिंग या अन्य विधियॉ व्यावसायिक रूप में कम सफल रही हैं।

## मूलवृन्त तैयार करना

मूलवृन्त तैयार करने के लिये पॉलीथीन के थैलों की संस्तुति की गयी है जिससे मूसला जड़ वाले पौधे बिना क्षति के प्रक्षेत्र में बेहतर ढंग से लगाये जा सकें। इसके अलावा पॉलीथीन की थैली में पौध तैयार करने से निराई-गुड़ाई, सिंचाई एवं उनके रख-रखाव में लगने वाले श्रम की बचत होती है। पॉलीथीन की थैली का उपयोग करने का मुख्य लाभ यह है कि पौधों को लगभग पूरे वर्ष नियंत्रित दशाओं में उगाया जा सकता है। अमरूद के बीज में अन्तःभित्ति पर एक कठोर परत होती है जिससे अंकुरण में विलम्ब होता है। परिपक्व फलों से ताजा बीज निकालकर उन्हें अच्छी तरह धोकर बीजों को गूदे से अलग करना चाहिये। पौधों को गलन रोग से बचाने के लिए बीज को बुआई से पूर्व कवक रोधी रसायन से उपचारित करना चाहिये। यदि अंकुरण होने पर गलन रोग देखा जाता है तो पौध एवं मिट्टी का मिश्रण दोनों को कवक रोधी रसायन से उपचारित करना चाहिये। गलन रोग के नियंत्रण के लिए 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के उपचार को प्रभावी पाया गया है। अमरूद के बीजों को पॉलीथीन थैली में किसी भी समय बोया जा सकता है। पॉलीथीन थैली को मिट्टी, बालू तथा गोबर की सड़ी खाद के 3:1:1 के अनुपात के मिश्रण (मीडिया) से भरना चाहिये। पॉलीथीन की थैली में बीजों को बोने के बाद 100 माइक्रान के पॉलीथीन शीट से ढक देना चाहिये। पॉलीथीन शीत ऋतु में ताप को संरक्षित तथा पौधों की प्रारंभिक अवस्थापना के लिए अनुकूल वातावरण (सूक्ष्म जलवायु) प्रदान करती है जो तीव्र अंकुरण में सहायक होता है। पॉलीथीन शीट द्वारा ढ़के बीज में तीन सप्ताह के अंदर लगभग 97 प्रतिशत तक अंकुरण देखा गया है।

## प्रवर्धन तकनीकें

### कलिकायन

कलिकायन विधि के अन्तर्गत मूलवृन्त के लिए समान एवं सक्रिय वृद्धि वाले एक वर्ष के पौधों का

[1]प्रभागाध्यक्ष (फसल सुधार), [2]शोध सहायक एवं [3]तकनीकी अधिकारी

चयन किया जाता है। पौधे की मोटाई एक सामान्य पेंसिल से अधिक नहीं होनी चाहिये। पौधे के तने की मोटाई जब 1.25 से 2.5 से.मी. होने की स्थिति में आ जाये तो यह मूलवृन्त के लिए उपयुक्त मानी जाती है। जिस पेड़ से कलिका का चयन किया जाता है वह उच्च वानस्पतिक वृद्धि वाला एवं हरे रंग का होना चाहिये जिससे की उसे सरलता से तने से अलग किया जा सके। मातृ वृक्ष की परिपक्व टहनियों के पत्ती कक्ष से फूली हुई एवं बिना फूटी सुषुप्त कली का चयन अच्छा होता है। कलिकायन की सफलता के लिए 1.0-1.5 से.मी. आकार के टुकड़े को कलिका सहित मातृ वृक्ष से अलग करना चाहिये। इसी आकार के छिलके को मूलवृन्त के तने से हटा देना चाहिये तथा मूलवृन्त के इसी हिस्से पर कलिका को बैठा देना चाहिये। यह जमीन से लगभग 15 से.मी. की ऊँचाई पर होनी चाहिये। कलिका को मूलवृन्त से बाँधने के लिए पॉलीथीन की पट्टी का उपयोग किया जाता है। कलिकायन के दो-तीन सप्ताह बाद पॉलीथीन पट्टी को परीक्षण के लिए खोला जा सकता है। जिन मूलवृन्तों पर कलिका अच्छी तरह जुड़ गयी होती है उनमें मूलवृन्त के ऊपरी हिस्से के 1/3 भाग को कलिका वृद्धि के लिए हटा देना चाहिये। दो-तीन सप्ताह बाद पुनः 2/3 हिस्से को कलिका के 2-3 से.मी. ऊपर से हटाया जाता है। कलिकायन के लिए मई, जुलाई एवं अगस्त का महीना सर्वोत्तम समय देखा गया है।

## स्टूलिंग

अमरूद प्रवर्धन का यह सबसे आसान एवं सस्ता तरीका है। वाँछित किस्मों और मूलवृन्तों के त्वरित विकास के लिए इस विधि का इस्तेमाल किया जाता है। इस विधि द्वारा पौधों पर ही जड़ विकसित कर उन्हें 45-50 से.मी. की दूरी पर क्यारी में लगाकर तीन साल तक बढ़ने दिया जाता है। पौधों को मार्च के महीने में जमीन के ऊपर से काट दिया जाता है। कटे हुए तने से नयी शाखायें निकलती हैं। मई माह में इन सभी शाखाओं पर जमीन के ऊपर लगभग 3.0 से.मी. की चौड़ी छाल वलयाकार में निकाल देनी चाहिये जिससे हटाये गये भाग पर कैम्बियम का निर्माण हो सके। इसके बाद सभी शाखाओं को 30 से.मी. की ऊँचाई तक मिट्टी से ढ़क देना चाहिये। नमी बनाये रखने के लिए शाखाओं को मल्च से ढ़क देना चाहिये। बरसात शुरू होने के दो माह बाद शाखाओं को मातृ वृक्ष के वलयाकार में कटे भाग से अलग कर पौधशाला में लगा देना चाहिये। अलग की गयी शाखाओं को पौधाशाला में लगाने के पहले मूल एवं शाख संतुलन को बनाये रखने के लिए पुनः उसी मातृ वृक्ष पर स्टूलिंग सितम्बर माह के प्रथम सप्ताह में की जाती है और जड़ युक्त शाखा को नवम्बर के प्रथम सप्ताह में अलग कर दिया जाता है। इसी प्रकार एक ही मातृ वृक्ष में दो बार स्टूलिंग की जाती है। पौधों में स्टूलिंग अनेक वर्षों तक की जा सकती है। पौधे की उम्र बढ़ने के साथ स्टूलिंग द्वारा प्राप्त पौधों की संख्या भी बढ़ती जाती है। इस प्रकार से प्राप्त पौधों की क्षमता बीजू पौधों की अपेक्षा बेहतर होती है। इस विधि में मूल वृद्धि हार्मोन की आवश्यकता नहीं होती है।

## गूटी

अमरूद प्रवर्धन के लिए गूटी एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक विधि है। गूटी के लिए वर्षा ऋतु का समय अत्यंत ही अनुकूल होता है। इस विधि में चुनी

हुई टहनी में 1.2 से.मी. या उससे अधिक के व्यास में 2.0 से.मी. चौड़ाई लिए हुए एक पट्टी के रूप में छाल को हटाते हैं। हटायी गयी छाल के भाग को पहले से पानी में भीगी हुई मास घास लगभग 7 से. मी. मोटाई एवं 10-12 से.मी. लंबाई में लपेट कर पॉलीथीन पट्टी से इस प्रकार से बाँधना चाहिये जिससे कि टहनी के ऊपर कोई दबाव नहीं हो और नमी भी कायम रहे। इससे तीन से पाँच सप्ताह के भीतर जड़ें निकल आती हैं। जब जड़ें विकसित हो जायें तो उन्हें मातृ वृक्ष से अलग कर लेना चाहिये। पॉलीथीन पट्टी को हटाकर तैयार पौधे को गमले/पॉलीथीन थैली में लगाकर छाया में नयी पत्ती आने तक रख देना चाहिये। जब नयी शाखायें 15-20 से.मी. की हो जायें तब तैयार पौधों को रोपण से पूर्व सूर्य की रोशनी में रखना चाहिये।

## वेज़ ग्राफ्टिंग

पौध प्रवर्धन की शीघ्र गुणन की यह तकनीक केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ में विकसित की गयी है। इस विधि में अमरूद के पौधों को पूरे वर्ष शीघ्रता से ग्रीन हाउस या खुले में विकसित करने की क्षमता विद्यमान होती है।

## मातृ शाखा का चयन

वेज़ ग्राफ्टिंग की सफलता के लिए मातृ शाखा का चयन एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण कार्य है। इस विधि के लिए 3-4 माह पुरानी शाखा सर्वाधिक उपयुक्त होती है। पेंसिल की मोटाई, 3-4 कलिका युक्त एवं 15-18 से.मी. लंबाई वाली मातृ शाखा कलम के लिए प्रयोग की जाती है। चयनित शाखा को मातृ वृक्ष से अलग करने के 5-7 दिन पूर्व सभी पत्तियों को हटा देना चाहिये। इससे सुषुप्त कलिकाओं को फूलने में मदद मिलती है और कलम के समय कलिका निकलने लगती है। यह कलम की उच्च सफलता के लिए अत्यन्त अत्यावश्यक है।

## विधि

सांकुर डाली के चयन के बाद मूलवृन्त को 15-18 से.मी. की ऊँचाई पर काट देना चाहिये। कटे हुए मूलवृन्त के मध्य भाग में चाकू के द्वारा 4.0-4.5 से.मी. गहरा चीरा लगाना चाहिये। मातृ शाखा के निचले हिस्से में दोनों ओर से वेज के आकार में छील देना चाहिये। तत्पश्चात मातृ शाखा को अच्छी तरीके से मूलवृन्त के चीरे हुए भाग में डाल देना चाहिये। यहाँ सावधानी बरतने की आवश्यकता है कि मूलवृन्त तथा शाखा एक दूसरे को अच्छी तरीके से पकड़ लें। इस जुड़े हिस्से को 150 गेज पॉलीथीन की 2 से.मी. चौड़ी एवं 25-30 से.मी. लंबी पट्टी से बाँध देना चाहिये। कलम करने के तुरन्त बाद कलम को 2.5 x 18.0 से.मी. लंबी सफेद पॉलीथीन कैप से ढ़क कर निचले हिस्से को रबड़ बैंड से कस देना चाहिये। मातृ शाखा 9-12 दिन में अंकुरित होने लगती है जिसे बाहर से भी देखा जा सकता है। कैप को 25 दिन बाद शाम के समय निकाल देना चाहिये। तैयार कलम को नेट हाउस में हार्डेनिंग के लिए स्थानांतरित कर देना चाहिये।

## लाभ

- यह विधि अपेक्षाकृत अन्य पौध प्रवर्धन विधियों से आसान है।

- कलिकायन की अपेक्षा सफलता का प्रतिशत अधिक होता है।
- वेज़ द्वारा तैयार कलमी पौध में 9-12 दिन का समय कलिका निकलने एवं 5 महीने का समय विक्रय योग्य होने में लगता है।
- इस विधि से तैयार पौधों को प्रक्षेत्र में स्थापित करने से अधिक सफलता अधिक प्राप्त होती है क्योंकि मूसला जड़ों को कोई नुकसान नहीं होता है।
- पॉली कैप से ढ़कने के कारण पौधों की कम ताप की दशा में भी सफलता की दर अधिक होती है।
- यदि किसी कारण से कलम बाँधने के बाद मातृ शाखा सूख जाती है तो कलम वाले हिस्से को अलग कर मूलवृन्त का पुनः उपयोग किया जा सकता है।
- इस विधि में पौधों को पॉलीथीन थैली में उगाकर कलम बाँधना, कैप से ढाँकना तथा पौधों की हार्डेनिंग की जाती है। मूलवृन्त के लिए पौधों को लगभग 6 से 8 महीने नर्सरी में उगाया जाता है और जब यह पेंसिल की मोटाई की हो जाये तब इस पर वेज़ ग्राटिंग की जाती है।

## उन्नत किस्में

देश में उगायी जाने वाली अमरूद की उन्नत किस्मों में इलाहाबाद सफेदा, सरदार, एपिल कलर, चित्तीदार, रेड फ्लेश्ड आदि प्रमुख हैं। नयी चयनित किस्मों में इलाहाबाद सुर्खा, ललित, अर्का मृदुला, पंत प्रभात, धारीदार, श्वेता तथा विकसित किस्मों में अर्का अमूल्या, सफेद जाम एवं कोहिर सफेद प्रमुख हैं।

**इलाहाबाद सफेदा:** इस किस्म के फल आकार में बड़े, गोल, चिकने तथा श्वेत, पीले रंग के होते हैं। फल का गूदा मीठा, दृढ़ एवं रंग में सफेद होता है। फल में उच्च मिठास एवं विटामिन-सी की प्रचुर मात्रा होती है। फलों के बीज मुलायम होते हैं। इस किस्म के फल स्वाद एवं सुवास के कारण अत्यधिक लोकप्रिय हैं।

**सरदार (लखनऊ-49):** इसके पेड़ बढ़ने वाले, फैलावदार, अधिक शाखा वाले तथा अधिक फलन वाले होते हैं। फल बड़े, उभार लिये गोल, चमकीले पीले तथा सफेद गूदा वाले होते हैं। बीज औसत संख्या में मुलायम होते हैं। फल स्वाद युक्त एवं प्रचुर विटामिन-सी वाले होते हैं।

**एपिल कलर:** फल मध्यम आकार, लाल रंग, मीठे एवं अच्छे भंडारण क्षमता वाले होते हैं। इनके फलों में रंग के विकास के लिए निम्न ताप का होना आवश्यक होता है। पेड़ मध्यम आकार के किन्तु पत्तियाँ अन्य प्रजातियों की अपेक्षा अधिक गहरे हरे रंग की होती हैं।

**चित्तीदार:** यह पश्चिमी उत्तर प्रदेश की एक प्रसिद्ध प्रजाति हैं। इसकी फल भित्ती पर लाल रंग की अनेक चित्तियाँ होती हैं। ये उच्च मिठास, छोटे से लेकर मध्यम आकार एवं मुलायम बीज वाले होते हैं। इसके फल का आकार एवं रूप तथा गूदा इलाहाबाद सफेदा के अनुरूप होता है। इसमें इलाहाबाद सफेदा एवं सरदार से अधिक मिठास होती है किन्तु विटामिन-सी की मात्रा अपेक्षाकृत कम होती है। इसके पेड़ इलाहाबाद सफेदा की भाँति होते हैं।

**रेड फ्लेशडः** इसके फल लाल गूदा वाले, मध्यम आकार के तथा चिकने होते हैं। इसमें बीज अधिक परन्तु मुलायम होते हैं। इसके फल मिठास वाले सुवास युक्त तथा प्रचुर मात्रा में विटामिन-सी लिये होते हैं।

**इलाहाबाद सुर्खाः** यह फल बड़ा होता है तथा इसका छिलका एवं गूदा दोनों लाल रंग का होता है। इसके फल मीठे, कम बीज वाले, प्रसन्नचित्त सुवास लिये होते हैं। इसके पेड़ तेजी से बढ़ने वाले, अर्धवृत्ताकार एवं घने छायादार होते हैं।

**ललितः** यह केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ द्वारा चयनित किस्म है। फल मध्यम आकार के लगभग 200-250 ग्राम वजन वाले होते हैं। यह आकर्षक पीले रंग के होते हैं। इसमें कभी-कभी लालिमा उभर आती है। यह इलाहाबाद सफेदा की तुलना में अच्छी उपज देने वाली किस्म है। फल का गूदा लाल एवं दृढ़ होता है तथा इसमें शर्करा एवं अम्लता का उपयुक्त मिश्रण होता है। इसके फल खाने एवं प्रसंस्करण (जैली, बेवरेज) दोनों के लिए उपयुक्त होते हैं।

**अर्का मृदुलाः** यह किस्म अमरूद की इलाहाबाद सफेदा प्रजाति से भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरू द्वारा चयनित की गयी है। इस किस्म के फल मध्यम आकार के उत्तम गुणों से युक्त एवं मिठास लिये हुए होते हैं। फलों का गूदा सफेद होता है जिसमें बीज मुलायम तथा संख्या में कम होते है। पेड़ मध्यम आकार के तथा अच्छी उपज देने वाले होते हैं।

पंत प्रभातः यह गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर द्वारा चयनित किस्म है। इसके पेड़ सीधे बढ़ने वाले, चौड़ी पत्ती तथा अधिक उपज वाले होते हैं। फल गोल, मध्यम आकार, चिकने छिलके वाले तथा हल्के पीले रंग के होते हैं। गूदा सफेद तथा फल छोटे बीजयुक्त, सरदार की अपेक्षा मुलायम होते हैं। फलों का स्वाद मीठा एवं सुवास युक्त होता है। विटामिन-सी की मात्रा 125-300 मि. ग्रा. प्रति 100 ग्राम फल में पायी जाती है।

**धारीदारः** मध्य प्रदेश के रीवा जिले में इसका चयन पुराने बीजू पेड़ से किया गया है। इसके पेड़ मध्यम लम्बे, सीधे एवं शाखायें ऊपर की ओर सीधी एवं फैलावदार वाली होती है। फल मध्यम से बड़े, गोल, पाँच से सात धारी वाले तथा लगभग 195 ग्राम के होते हैं। फलों का रंग हरापन के साथ पीला तथा गूदा मुलायम एवं मीठा होता है। इसमें विटामिन-सी की मात्रा लगभग 200 मि. ग्रा. प्रति 100 ग्राम पायी जाती है।

**श्वेताः** यह प्रजाति केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ द्वारा चयनित की गयी है। फल बड़े, गोल, श्वेत आभायुक्त पीले होते हैं। कभी-कभी फलों पर लालिमा भी उभर आती है। फल कम बीज वाले, मुलायम तथा सफेद गूदायुक्त होते हैं। फल अधिक मिठास (टी.एस.एस. 14%) एवं विटामिन-सी (300 मि. ग्रा./100 ग्राम) वाले होते हैं। यह अधिक उपज वाली किस्म है।

## संकर किस्में

**अर्का अमूल्या (बेदाना x इलाहाबाद सफेदा):** भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरू द्वारा यह संकर किस्म विकसित की गयी है। अधिक उपज वाले इसके पेड़ औसत सुडौल होते हैं। फल मध्यम आकार (180-200 ग्राम), श्वेत तथा मीठे (टी.एस. एस. 12.5%) गूदे वाले छोटे (100 बीज का भार-1.8 ग्राम), मुलायम एवं कम बीजयुक्त होते हैं।

**सफेद जाम (इलाहाबाद सफेदा x कोहिर):** यह संकर किस्म फल अनुसंधान केन्द्र, संगारेड्डी द्वारा विकसित की गयी है। पेड़ मध्यम ऊँचाई तथा भारी उपज देने वाले होते हैं। फल गोल, पतले छिलके एवं मुलायम बीज तथा अच्छे स्वादयुक्त होते हैं।

**कोहिर सफेद (कोहिर x इलाहाबाद सफेदा):** पेड़ बड़े आकार के अर्धवृत्ताकार होते हैं। इसके फल खटासयुक्त तथा अपने माता-पिता से बड़े आकार के होते हैं।

# अमरूद के बागों की स्थापना एवं रखरखाव

घनश्याम पाण्डेय[1]
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अमरूद आसानी से प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होने वाला आम आदमी का फल है। यही कारण है कि अमरूद को 'गरीबों के फल' की संज्ञा भी दी जाती है। अमरूद की पैदावार भारत के अधिकांश राज्यों में की जाती है। अमरूद की बागवानी से कम संसाधनों में भी प्रत्येक वर्ष अधिक उपज तथा समुचित लाभ प्राप्त किया जा सकता है। अधिक उत्पादकता, वैविध्य जलवायु में अनुकूलनीयता तथा विटामिन 'सी' की प्रचुर मात्रा होने के कारण अमरूद अन्य फलों की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है। इन्हीं गुणों के कारण अमरूद की बागवानी देश के कोने-कोने में किसानों एवं बागवानों के लिए वरदान साबित हो रही है।

## जलवायु

अमरूद की बागवानी विभिन्न प्रकार की जलवायु में बिना किसी समस्या के आसानी से की जा सकती है। अमरूद की पैदावार उष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों की अपेक्षा मिश्रित (सर्दी एवं गर्मी) मौसम वाले क्षेत्रों में प्रचुरता से होती है। अमरूद की खेती सूखे क्षेत्रों में भी की जा सकती है। इसकी बागवानी 15 से 460 से.ग्रे. तापमान तक सफलतापूर्वक की जा सकती है तथा फूल एवं फलन के लिए 23 से 280 से.ग्रे. के बीच का तापमान काफी उपयुक्त होता है। समान रूप से वितरित 500-1000 मि.मी. वर्षा वाले क्षेत्र अमरूद के उत्पादन के लिए उपयुक्त होते हैं।

## भूमि

उष्ण तथा उपोष्ण कटिबंधीय फलों में अमरूद एक ऐसा विशिष्ट फल है जिसकी बागवानी कम उपजाऊ तथा लवणीय परिस्थितियों में भी कम देखभाल के बावजूद आसानी से की जा सकती है। अमरूद 4.5 से 9.5 पी.एच. मान वाली मिट्टी में पैदा किया जा सकता है। इसकी सबसे अच्छी बागवानी बलुई दोमट भूमि में की जाती है जिसका पी.एच. मान 5-7 के मध्य होता है। यदि जमीन का कोई हिस्सा किसी और बागवानी के लिए उपयुक्त नहीं है तो उसमें भी अमरूद पैदा किया जा सकता है।

## पौध रोपण

पौध रोपण से पहले खेत की 3-4 बार अच्छी तरह जुताई कर उसे समतल कर खरपतवार निकाल लेना चाहिये। चतुर्भुज या आयताकार विधि से अमरूद का पौध रोपण किया जाता है जिससे कि अन्तः-शस्य क्रियाएँ आसानी से की जा सकें। मानसून

[1]प्रधान वैज्ञानिक

से पहले 75 x 75 x 75 सें.मी. व्यास के 5 x 5 मी. दूरी पर गड्ढे बना लेना चाहिये। इस विधि से प्रति हेक्टेयर 400 पौधे लगाये जा सकते हैं। ऊपर की मिट्टी गड्ढे के एक तरफ तथा नीचे की मिट्टी दूसरी तरफ रखी जाती है। सूर्य की अधिकतम रोशनी प्राप्त करने के लिए पौधों को लाइन से उत्तर-दक्षिण दिशा में लगाना चाहिये। 15-20 दिनों के बाद इन गड्ढों में 2 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट एवं 30-40 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद ऊपर की मिट्टी में मिला कर गड्ढा भर देते हैं। गड्ढे की सतह से ऊपर तक कुछ ज्यादा मिट्टी डालते हैं जिससे कि सिंचाई के बाद मिट्टी दबकर जमीन के बराबर आ जाये। दीमक से बचाव हेतु गड्ढे में ट्राइसेल (2.5 मि.ली./ली. पानी) या सेविन पाउडर (20 ग्रा./गड्ढा) डालते हैं। प्लाटिंग बोर्ड की मदद से गड्ढे में पौधे की सही स्थिति का पता लगा कर और गड्ढे के बीच में थोड़ी मिट्टी हटा कर पौधे को स्थापित करते हैं। बगल की मिट्टी को अच्छी तरह से दबा देते हैं तथा पौधे के चारों ओर नियमित सिंचाई के लिये थाला बनाते हैं। पौधों को सहारा देने के लिए 3-4 लकड़ी के डंडों का सहारा लगाते हैं जिससे पौधा ग्राटिंग के स्थान से टूटे नहीं। जुलाई से अक्टूबर माह तक पौध रोपण का सर्वोत्तम समय होता है।

## दोहरी हेज-रो-पौध रोपण प्रणाली

अखिल भारतीय समन्वित फल सुधार परियोजना के अन्तर्गत किये गये अनुसंधान से ज्ञात हुआ है कि इलाहाबाद सफेदा किस्म में प्रति इकाई क्षेत्र से अधिकतम उत्पादन के लिए दोहरी-हेज-रो पौध रोपण प्रणाली गुणवत्तायुक्त फलों एवं अधिक उत्पादकता हेतु काफी लाभदायक पायी गयी है जिसमें 800-900 पौधे प्रति हेक्टेयर लगाये जाते हैं। केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ में इलाहाबाद सफेदा किस्म के लिए 3 x 6 मीटर ( 555 पौधे/हे.) की दूरी को अधिक सार्थक पाया गया है। इस पद्धति में कम समय तथा खर्च में अच्छी गुणवत्ता वाली उत्पादकता को ध्यान में रखते हुए उत्पादन प्रयोगों में पौधों के आकार पर विशेष नियंत्रण की आवश्यकता होती है। पौधे की ऊँचाई पर नियत्रंण रखने के लिए उसकी शीर्ष बढ़वार को शुरुआती अवस्था में ही नियंत्रित किया जाता है। अमरूद में फलन केवल एक वर्ष पुरानी शाखाओं पर ही होता है इसलिए इस पर प्रूनिंग एवं ट्रेनिंग का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस दिशा में इस संस्थान द्वारा अमरूद में अति सघन बागवानी की विधा का मानकीकरण किया गया है जिसमें 1 x 2 मीटर की दूरी पर 5000 पौधे प्रति हेक्टेयर लगाये जाते हैं तथा पेड़ की शुरुआती अवस्था से ही लगातार टॉपिंग एवं हेजिंग द्वारा उनके आकार को नियंत्रित किया जाता है।

## कटाई-छँटाई

अधिकतम उत्पादन की प्राप्ति के लिये पौध रोपण के 3-4 माह के अन्दर ही अमरूद के पौधों की कटाई-छँटाई की आवश्यकता पड़ती है। प्रारम्भ में पौधों को 90 सें.मी. से 1.0 मीटर की ऊँचाई तक सीधे बढ़ने दिया जाता है और इस ऊँचाई के बाद शाखाएँ निकलने देते हैं। पौधों को इस तरह से विकसित करना चाहिये कि पौधे के आधार के पास आवश्यक शस्य-क्रियाएँ आसानी से की जा सकें। पार्श्व आधार शाखाओं की इस तरह से सधाई एवं छँटाई की जानी चाहिये कि वे पौधे के मध्य बिन्दु से

बाहर की ओर फैल सकें। अगर कोई शाखा इस प्रणाली के लिये उपयुक्त नहीं हो तो उसे काट देना चाहिये। समय-समय पर सूखी टहनियाँ हटा दी जानी चाहिये। जड़ के पास निकलने वाले कल्लों को हटाते रहना चाहिये जिससे कि पौधे की वृद्धि पर नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़े। सही तरीके से की गयी छँटाई द्वारा तैयार किये गये पेड़ का व्यास 4 मीटर तक सीमित होना चाहिये। टहनियों के बीच का कोण अधिक रखा जाता है जिससे कि पौधे के हर हिस्से को पर्याप्त धूप मिल सके। केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ में शुरुआती वर्षों के दौरान टहनियों को नीचे झुकाने पर फलन में काफी उत्साहवर्द्धक परिणाम प्राप्त हुए हैं।

## खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

अत्यन्त सहनशील पौधा होने के कारण अमरूद को विभिन्न प्रकार की मृदा और जलवायु वाले क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक पैदा किया जा सकता है। पौधों में पत्तियाँ उपापचय क्रिया का मुख्य स्थान होती हैं तथा पत्तियों में उपापचयी क्रियाओं में होने वाले परिवर्तन का पौधों पर प्रभाव पड़ता है। अतः अमरूद के पौधों की पोषण की माँग का पता लगाने के लिये पत्तियों के विश्लेषण पर जोर दिया जाता है। पत्तियों के विश्लेषण के लिए 50-60 दिन पुरानी तथा टहनी शीर्ष से तीसरी या चौथी जोड़ा पत्ती पौधे के चारों तरफ से ली जाती हैं तथा विश्लेषण वर्षा ऋतु के लिए जुलाई में तथा शीत ऋतु के लिए नवंबर माह में किया जाता है।

## उर्वरीकरण

पौधों में दी जाने वाली खाद एवं उर्वरक की मात्रा पौधों की आयु, दशा एवं मृदा के प्रकार पर निर्भर करती है। पौधों की उचित वृद्धि तथा लाभदायक उत्पादन प्राप्त करने के लिए उर्वरक को आवश्यकतानुसार उचित मात्रा में डालना चाहिये। अमरूद में उर्वरक डालने की प्रकिया पौधे के रोपण के समय ही शुरू हो जाती है। इसलिए 15-20 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद तथा 1.5 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट मिट्टी में मिलाकर गडढों में भरने के लिए डालनी चाहिये। पौध रोपण के एक वर्ष बाद यूरिया 260 ग्राम + 375 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट + 100 ग्राम पोटाश प्रति पौधा दिया जाता है। पाँच वर्ष की आयु तक इस मात्रा में हर वर्ष गुणात्मक वृद्धि की जाती है। इस तरह पाँच वर्ष या इससे अधिक आयु के पौधों में 1300 ग्राम यूरिया + 1875 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट + 500 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश के साथ 50 कि. ग्रा. गोबर की सड़ी खाद डालते हैं। इस मिश्रण को दो बराबर भागों में बाँट कर जून तथा सितंबर माह में डाला जाता है। म्यूरेट ऑफ पोटाश की पूरी मात्रा तथा यूरिया की आधी मात्रा जून माह में तथा यूरिया की शेष मात्रा एवं सिंगल सुपर फॉस्फेट की पूरी मात्रा सितंबर माह में डालते हैं।

उर्वरक पौधे के तने से 30 सें.मी. की दूरी पर तथा पेड़ द्वारा आच्छादित पूरे क्षेत्र में डालते हैं। इसके बाद 8-10 सें.मी. गहरी गुड़ाई करते हैं जिससे कि खाद पूर्णतया जड़ को प्राप्त हो सके। गुड़ाई गहरी नहीं करनी चाहिये क्योंकि अमरूद में पोषक तत्वों को समाविष्ट करने वाली जड़ें ऊपरी सतह पर ही होती हैं। संस्थान में किये गये प्रयोगों के आधार पर पौधों में 800 ग्राम नीम लिप्त यूरिया + 600 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति पौधा

(पौध रोपण के 7 वर्ष बाद) अमरूद उत्पादन की वृद्धि में उपयोगी है। ड्रिप प्रणाली द्वारा उर्वरीकरण करने पर भी उत्पादन में वृद्धि पायी गयी है। संस्तुत नाइट्रोजन की 50 प्रतिशत मात्रा (300 ग्राम) 60 प्रतिशत ओपन पैन वाष्पीकरण जल मात्रा ड्रिप प्रणाली द्वारा देने पर उपज में अच्छी वृद्धि देखी गयी है।

## ब्रौंजिंग

अमरूद की एक समस्या है कि कम पी.एच. मान वाले मृदा की भूमि में बोरॉन, जिंक, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश की कमी हो जाती है। भूमि में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश एवं जिंक की क्रमशः 200, 80, 150 एवं 50 ग्राम प्रति पौधा प्रति वर्ष देने या इन तत्वों का 2 प्रतिशत की दर से 4 महीनों तक पर्णीय छिड़काव करने पर भी पत्तियों को ब्रौजिंग से बचाया जा सकता है।

## खर-पतवार नियंत्रण

बाग लगाने के प्रथम 2-3 वर्षों के दौरान खरपतवार नियंत्रण बेहद महत्वपूर्ण है। इसके बाद पौधे स्वतः इतनी छाया देते हैं कि खरपतवार बढ़ नहीं पाते। 100 माइक्रोन की काली पॉलीथीन या सूखी घास, केले की पत्तियाँ, लकड़ी के बुरादे, धान के अवशेष (पुआल, भूसी) जैसे कार्बनिक पदार्थों को तने के आसपास के क्षेत्र में फैला देने से खरपतवार नियंत्रण में काफी सहायता मिलती है। इसके लिए शाकनाशी की अनुशंसा सामान्यतया नहीं की जाती है। आवश्यकता पड़ने पर ग्लायफोसेट जैसे खरपतवारनाशी का छिड़काव किया जा सकता है।

## सिंचाई

अन्य फलों की अपेक्षा अमरूद में कम सिंचाई की आवश्यकता होती है। यह लम्बे सूखे काल के साथ विभिन्न वर्षाकाल को आसानी से सह सकता है। वानस्पतिक वृद्धि तथा फूलों एवं फलों के विकास के समय उचित नमी का होना आवश्यक होता है। मानसून के दौरान वर्षा के अलावा सर्दियों में 25 दिनों के अन्तराल तथा गर्मियों में 10-15 दिनों के अन्तराल पर की गयी सिंचाई पौधों के उचित विकास एवं फलन में सहायक होती है। सूखे की स्थिति में नये पौधों में उचित सिंचाई पर ध्यान दिया जाना चाहिये। प्रतिदिन होने वाले जल ह्रास (25-50 मि.मी./सप्ताह) को कम करने में टपक सिंचाई प्रणाली उचित साधन है। इस विधि से बाग में प्रतिदिन आवश्यकतानुसार हर पौधे में पर्याप्त मात्रा में पानी दिया जाता है। बड़े बागों में जहाँ सिंचाई चयन के आधार पर की जाती है, माइक्रो-जैट या स्प्रिंकलर विधि ज़्यादा उपयुक्त होती है। इस विधि से पौधों में उर्वरक को सीधे पौधे में देने में भी सहायता मिलती है। केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ में 60 प्रतिशत ओपन पैन वाष्पीकरण पर सिंचाई देने पर अधिकतम उत्पादन पाया गया है।

## फसल नियमन

अमरूद में फूल आने के दो प्रमुख मौसम हैं। पहला मार्च से मई, जिसके फल बरसात के मौसम (आखिरी जुलाई से मध्य अक्टूबर) में तोड़े जाते हैं तथा दूसरा जुलाई से अगस्त, जिसके फल सर्दी (आखिरी अक्टूबर से मध्य फरवरी) में तोड़े जाते हैं। लेकिन कभी-कभी एक तीसरी फसल भी ली

जाती है जिसमें फूल अक्टूबर में एवं फल मार्च में प्राप्त होते हैं। वर्षा ऋतु के फूल सर्दी में भरपूर एवं स्वादिष्ट फल देते हैं किन्तु वर्षा ऋतु की फसल अच्छी नहीं होती है। विभिन्न प्रकार के फफूँद जनित रोग जैसे एन्थ्रेक्नोज तथा कीड़े जैसे फल-मक्खी फलों को बेहद नुकसान पहुँचाते हैं। यह फसल कम गुणवत्तायुक्त होती है। इसके फल खुरदरे, स्वादहीन एवं कम पोषक तत्त्व वाले होते हैं। वर्षा ऋतु के फल शीघ्र खराब हो जाते हैं तथा फलों में कम चमक होती है। तुड़ाई उपरान्त फल सूखे, धब्बेयुक्त एवं मुलायम हो जाते हैं। आर्थिक दृष्टि से शीत ऋतु की फसल वर्षा ऋतु की अपेक्षा अधिक मूल्यवान होती है। इसमें फल बीमारी-रहित, अधिक पोषक तत्त्व युक्त तथा अच्छे फलों के आकार के कारण अच्छा मूल्य पाते हैं। शीत ऋतु के फलों की भंडारण क्षमता अच्छी होने के कारण ये बिना सड़े-गले लम्बी दूरी तक भेजे जा सकते हैं।

बाग को नुकसान से बचाने के लिए फसल नियमन के साधारण एवं प्रभावी तरीके अपनाये जा सकते हैं। इन तरीकों द्वारा पौधों से अच्छी गुणवत्तायुक्त, कीट-व्याधि रहित, केवल शीत ऋतु की फसल ली जा सकती है। इस संस्थान द्वारा फसल नियमन की एक तकनीक विकसित की गयी है, जिसमें कम गुणवत्तायुक्त वर्षा ऋतु की फसल को किस्म इलाहाबाद सफेदा में 10: यूरिया तथा किस्म सरदार में 15: यूरिया का अप्रैल-मई के महीने में 10 दिनों के अन्तराल पर एक से दो छिड़काव करने से रोका जा सकता है। इस विधि में शीत ऋतु में गुणवत्तायुक्त फसल द्वारा इलाहाबाद सफेदा किस्म के उत्पादन में चार गुनी वृद्धि एवं सरदार किस्म के उत्पादन में तीन गुनी वृद्धि पायी गयी जो अतिरिक्त आय प्रदान करती है। इस प्रकार फसल नियमन हेतु कार्य को अपना कर कम धन खर्च में अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है साथ-साथ फल मक्खी एवं फल भेदक कीटों, एन्थ्रेक्नोज तथा फल गलन समस्याओं का प्रभावी नियंत्रण भी किया जा सकता है। इसके अलावा फसल नियमन कुछ अन्य उपाय भी अपनाये जा सकते हैं। जिसका विवरण निम्न प्रकार है।

- दिसम्बर से जून या मानसून आने तक सिंचाई रोकना। यह उपाय दक्षिण भारत के लिए अनुशंसित किया गया है।
- उत्तरांचल में वर्षा ऋतु की फसल को रोकने के लिए वसंत ऋतु के नये कल्लों को तीन-चौथाई (3/4) तक काट देने की अनुसंशा की गयी है।
- केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ में अनुसंधान द्वारा देखा गया है कि मई माह में पूरे पेड़ की शाखाओं को 50 प्रतिशत तक काट देने से नयी शाखाओं का सृजन होता है और उससे शीत ऋतु में भरपूर फसल मिलती है।

## अन्तः-सस्य क्रियाएँ

बाग को हमेशा साफ-सुथरा रखने के लिए अन्तःशस्य क्रियाएँ आवश्यक हैं। इससे भूमि की भौतिक दशा ठीक रहती है एवं भूमि की ऊपरी परत टूटने से मृदा में वायु का आवागमन बना रहता है। साथ ही जो खर-पतवार जो मृदा में नमी तथा पोषक तत्वों का ह्रास करते हैं को नियंत्रित किया जा सकता है। बाग के शुरूआती वर्षों में खर-पतवार नियंत्रण के लिए हल्की जुताई आवश्यकतानुसार की जा

सकती है। लगातार अन्तःसस्य क्रियाओं को करने से पौधों की टहनियों एवं जड़ों का अच्छा विकास होता है।

फलने वाले बागों में एक जुताई जून जबकि दूसरी दिसम्बर में की जाती है। पहली जुताई से मानसून का अधिकतम पानी भूमि में समा जाता है तथा दूसरी जुताई से पौधे की वानस्पतिक वृद्धि में मदद मिलती है तथा खर-पतवार नियंत्रण हो जाता है।

## अन्तः फसलें

नये बाग में खाली पड़े स्थान पर कुछ फसल या सब्जियाँ उगा कर अतिरिक्त आर्थिक लाभ लिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, इन क्रियाओं से खर-पतवार नियंत्रण, मृदा की उर्वराशक्ति बढ़ाने तथा पोषक तत्त्वों के ह्रास को रोकने में मदद मिलती है। किन्तु अमरूद के लिए फसल/सब्जी का चुनाव ध्यान पूर्वक करना चाहिये। चुनी गयीं फसलें बहुत लम्बी या फैलाव वाली नहीं होनी चाहिये तथा उनकी पानी एवं पोषक तत्त्वों की माँग भी अधिक नहीं होनी चाहिये, क्योंकि यह अमरूद की फसल पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। अतः सब्जियाँ एवं दलहनी वाली फसलें अमरूद में अन्तः खेती के लिए उपयुक्त हैं। दलहनी फसलों से भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ती है। इसके अतिरिक्त हरी खाद वाली फसलें जैसे सनई *(सेसबीनिया केनाबीना)*, एवं ढैंचा *(क्रोटैलेरिया जुन्सिया)* भी भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाते हैं। हरी खाद वाली फसलें मानसून शुरू होने पर बोयी जाती हैं तथा उन पर फूल आने से पहले ही उन्हें जुताई कर भूमि में दबा दिया जाता है। मटर, चना, बीन्स, अरहर आदि दलहनी फसलों को अमरूद के लिए प्राथमिकता दी जाती है लेकिन कोई भी फसल फल वृक्ष के थाले में नहीं बोनी चाहिये।

# अमरूद की सघन एवं अतिसघन बागवानी

वी.के.सिंह[1]

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

देश के उष्ण कटिबंधीय एवं उपोष्ण क्षेत्रों में उत्पादित होने वाले फलों में अमरूद का अन्यतम स्थान है। अमरूद के पेड़ों में परिस्थिति के अनुसार स्वयं को ढालने की क्षमता तथा लवणीय या कमजोर मृदा में भी अधिक उत्पादकता होने के कारण इसकी बागवानी अत्यन्त लोकप्रिय है। अमरूद की बागवानी के लिए अपेक्षाकृत कम लागत एवं देखभाल की आवश्यकता होती है। इसके बावजूद अमरूद की पर्याप्त मात्रा में उपज प्राप्त की जा सकती है। परंपरागत पद्धति से की जाने वाली अमरूद की बागवानी में वृहत् आकार की कैनॉपी (आच्छादन) के कारण प्रायः उत्पादकता के वाँछित लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो पाती है। इसी कारण अमरूद के उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि लाने के लिए केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ ने सघन एवं अतिसघन (मीडो) बागवानी पद्धतियाँ विकसित की हैं। इन पद्धतियों के द्वारा अमरूद के उत्पादन में प्रति हेक्टेयर उच्च उत्पादकता के लक्ष्य की प्राप्ति में सहायता मिलती है।

## वर्तमान स्थिति

अमरूद की बागवानी में आयी लोकप्रियता, घरेलू तथा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में इसकी माँग में हुई वृद्धि को भी दर्शाता है। अमरूद का व्यापार विश्व के 60 से अधिक देशों में किया जाता है। अमरूद के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के अन्तर्गत इसके प्रसंस्कृत उत्पादों का निर्यात अमेरिका, जापान तथा यूरोपीय देशों में किया जाता है। भारत में अमरूद का उत्पादन अधिकांश राज्यों में होता है परन्तु उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार, आँध प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, कर्नाटक तथा तमिलनाडु इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं।

बागवानी के समग्र विकास में अमरूद की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। फलों के कुल उत्पादन में अमरूद का योगदान लगभग 3.3 प्रतिशत है। देश में अमरूद का उत्पादन लगभग 205 हजार हेक्टेयर क्षेत्र में किया जाता है जिससे 24.62 मिलियन टन अमरूद की प्राप्ति होती है। किन्तु वर्तमान समय में अमरूद की उत्पादकता लगभग 12 टन प्रति हेक्टेयर ही है। दूसरे शब्दों में, अमरूद की कुल उत्पादकता अभी भी अपनी वास्तविक क्षमता से काफी कम है। क्षेत्रफल एवं उत्पादन दोनों ही दृष्टि से अमरूद उत्पादन में उत्तर प्रदेश अग्रणी राज्य है। महाराष्ट्र एवं मध्य प्रदेश का स्थान क्रमशः दूसरा एवं तीसरा है। किन्तु उत्पादकता की दृष्टि से मध्य प्रदेश (लगभग 29 टन प्रति हेक्टेयर) का प्रथम स्थान है। इसके बाद पंजाब, कर्नाटक एवं गुजरात राज्यों का स्थान आता है।

[1]प्रधान वैज्ञानिक

इलाहाबाद सफेदा तथा सरदार (एल-49) किस्में उत्पादकता, उच्च गुणवत्ता तथा बाजार द्वारा स्वीकारे जाने के कारण अभी भी भारतीय अमरूद उद्योग के मुख्य आधार हैं। स्वाद में उत्तम तथा प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त किस्म ललित की लोकप्रियता विगत वर्षों में तेजी से बढ़ी है। अमरूद की इस किस्म का कुल उत्पादन क्षेत्रफल में महाराष्ट्र, आँध्र प्रदेश तथा कर्नाटक राज्यों में महत्वपूर्ण रूप से वृद्धि हुई है।

हाल ही में संस्थान द्वारा उच्च उत्पादन क्षमता तथा फल की उत्तम गुणवत्ता वाला श्वेता नामक अमरूद की किस्म को जनहित के लिए जारी किया गया है। इसके अलावा पंत प्रभात, धारीदार, अर्का मृदुला, अर्का अमूल्या, सफेद जाम, कोहिर सफेदा, हिसार सुर्खा, हिसार सफेदा तथा इलाहाबाद सुर्खा को भी व्यावसायिक बागवानी के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न अनुसंधान संस्थानों एवं राज्य कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा अलग-अलग राज्यों के लिए संस्तुत किया गया है।

## बौने आकार वाले पेड़ों का लाभ

- फल तुड़ाई में आसानी होने के साथ-साथ लागत भी कम आती है।
- फल देने वाली शाखायें अनुत्पादक शाखाओं की तुलना में अधिक संख्या में होती है।
- नाशीकीट एवं रोगों के नियंत्रण हेतु दवा के छिड़काव में आसानी होती है।
- उच्च आर्थिक लाभ की प्राप्ति के लिए सीमित क्षेत्र में अधिक पौध-रोपण संभव होता है।
- सारणी-1 में परंपरागत, सघन एवं अतिसघन बागवानी पद्धतियों में तुलना दर्शायी गयी है।

**सारणी-1: अमरूद उत्पादन करने के परंपरागत, सघन एवं अतिसघन बागवानी पद्धतियों में तुलना**

| विशेषण | परंपरागत पद्धति | सघन बागवानी पद्धति | अतिसघन बागवानी पद्धति |
|---|---|---|---|
| **फलत** | तीन वर्ष के पश्चात | दो वर्ष के पश्चात | पहले वर्ष से |
| **उत्पादन** | 9-20 टन/ हेक्टेयर | 15-28 टन/ हेक्टेयर | 40-60 टन/हेक्टेयर |
| **प्रबंधन** | पौधों के वृहत् आकार के कारण प्रबंधन में कठिनाई | पौधों के वृहत् आकार तथा सघनता के कारण प्रबंधन में कठिनाई | छोटे आकार के वृक्ष होने के कारण प्रबंधन में आसानी |
| **श्रम** | अधिक श्रमिक की आवश्यकता | अधिक श्रमिक की आवश्यकता | कम श्रमिक की आवश्यकता |
| **उत्पादन लागत** | उत्पादन की अधिक लागत | उत्पादन की अधिक लागत | उत्पादन की कम लागत |
| **तुड़ाई** | कठिन | कठिन | आसान |
| **गुणवत्ता** | वृहत् कैनॉपी के कारण सूर्य की कम रोशनी तथा फलों में निम्न गुणवत्ता | वृहत् कैनॉपी के कारण सूर्य की कम रोशनी तथा फलों में कम गुणवत्ता | छोटी कैनॉपी व्यवस्था से हवा के बहाव तथा सूर्य की रोशनी का अधिक प्रवेश एवं रोगों में कमी, उच्च गुणवत्ता वाले फलों की प्राप्ति |

## सघन बागवानी पद्धति

अमरूद की सघन बाग में पौध रोपण 6.0 मी. (पंक्ति से पंक्ति) x 3.0 मी. (पौधे से पौधे) के अनुसार की जाती है जिसमें 555 पौधे /हेक्टेयर समाविष्ट होते हैं। पौध रोपण के 1-2 माह बाद लगाये गये सभी पौधों को जमीन से 60-70 से.मी. की ऊँचाई से काटा जाता है। इस आकार सधाई तथा छँटाई द्वारा पौधे का व्यास 2.0 मी. तथा ऊँचाई 2.5 मी. सीमित रखी जाती है। सघन बागवानी पद्धति में कल्लों की कटाई-छँटाई अतिसघन बागवानी पद्धति के अनुसार ही की जाती है जो निम्नलिखित है।

## अतिसघन (मीडो) बागवानी पद्धति

अमरूद के अतिसघन बाग में पौध रोपण 2.0 मी. (पंक्ति से पंक्ति) x 1.0 मी. (पौधे से पौधे) के अनुसार की जाती है। पौध रोपण के 1-2 माह बाद लगाये गये सभी पौधों को जमीन से 30-40 से. मी. की ऊँचाई से काटकर उन्हें बौना आकार देना चाहिये। ध्यान रहे इस ऊँचाई के नीचे कोई भी प्ररोह या शाखा न रहे और यदि कोई शाखा रह जाये तो उसे भी हटा देना चाहिये। तात्पर्य यह है कि पौधे का तना सीधा रहने के साथ-साथ शाखा रहित हो। कटे हुये भाग के निचले हिस्से से 15-20 दिन बाद नये प्ररोहों (कल्लों) का सृजन शुरू हो जाता है। सामान्यतया कटाई बिन्दु के निचले भाग से 2-4 प्ररोह निकलते हैं। प्रारंभ में इन सभी कल्लों को बढ़ने दिया जाता है। जब प्ररोह 3-4 माह में परिपक्व हो जायें तो उन सभी प्ररोहों के लंबाई के आधे भाग को काट देते हैं जिससे एक बार पुनः नये कल्लों का हर प्ररोह के कटाई बिन्दु के निचले भाग से सृजन हो सके। पूर्व की भाँति इन सभी कल्लों को बढ़ने दिया जाता है और 3-4 माह बाद पुनः इन सभी कल्लों के लम्बाई के आधे भाग को काट देते हैं। कटाई के उपरान्त नये कल्लों का सृजन होता है जिन पर फूल आना प्रारम्भ हो जाते हैं। इस तरह एक साल के अन्दर पौधे की तीन बार कटाई इस आशय के साथ की जाती है कि बढ़िया कैनॉपी बन सके और एक साल के अन्दर पौधे फलन की अवस्था में आ जायें। मूल रूप से अतिसघन बागवानी में सधाई एवं छँटाई उत्पादन बढ़ाने, आवश्यक तथा अव्यवस्थित शाखाओं को हटाने के साथ लागत कम करने के अलावा पौधे की ऊँचाई और फैलाव पर नियन्त्रण के लिए होती है जिससे पौधों की देख-रेख में भी आसानी हो सके। तीसरी कटाई के बाद फूल एवं फल आना शुरू हो जाते हैं किन्तु यह जरूरी नहीं है कि हर प्ररोह में फूल तथा फल लगें। मगर प्ररोह की कटाई-छँटाई को जारी रखा जाता है जिससे पौधे का बौनापन बना रहे। एक वर्ष उपरान्त प्रति वर्ष प्ररोह की कटाई मई-जून, सितम्बर-अक्टूबर और जनवरी-फरवरी में की जाती है तथा पौधे के हर प्ररोह के आधे परिपक्व भाग को छोड़कर हरे भाग को काटा जाता है। सामान्यतया जनवरी-फरवरी में फल होते हैं। उस समय जहाँ फल लगे हों ठीक उसके ऊपरी भाग को काटा जाता है जिससे कटाई उपरान्त नये कल्लों का सृजन हो सके। जिन कल्लों मे फूल निकलता है उनका फल बरसात में प्राप्त होता है। इन्हीं प्ररोहों की दूसरी कटाई मई-जून में करते हैं एवं कटाई उपरान्त पुनः नये प्ररोहों का सृजन होता है। कटाई के उपरान्त जिन प्ररोहों पर फूल आते हैं उनकी फलत जाड़े में प्राप्त होती है।

फिर इन्हीं प्ररोहों की कटाई सितम्बर-अक्टूबर में करते हैं। यह कटाई खासकर कैनॉपी प्रबंधन के लिये की जाती है। फिर भी इस कटाई उपरान्त मार्च-अप्रैल में फल की प्राप्ति हो जाती है। इस तरह अतिसघन बागवानी में साल में तीन बार कटाई कर पौधों को बौना रखते हुए अधिक-से-अधिक गुणवत्तायुक्त उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। संस्थान में अतिसघन बागवानी के अन्तर्गत लगे सभी पौधों की लगातार सात वर्षों से कटाई-सधाई की जा रही है और आज भी पौधों की ऊँचाई मात्र 1.25 मी. ही है और उत्पादन 6 से 10 कि.ग्रा. प्रति पौधा प्राप्त हो रहा है।

अतिसघन बाग में लगे फलों की तुड़ाई में कम श्रम एवं समय लगने के साथ-साथ फलों के तुड़ाई के दौरान कोई नुकसान नहीं होता है। अतिसघन बागवानी पद्धति अपनाकर पौध आकृति प्रबंधन करते हुए गुणवत्तायुक्त अधिक उत्पादन प्रति वर्ष लिया जा सकता है। अब तक सात प्रजातियों का मूल्यांकन इस पद्धति से किया जा चुका है और लगभग सभी प्रजातियों में इसका साकारात्मक प्रभाव देखा गया है।

## कैनॉपी प्रबंधन

पौध लगाने के कुछ वर्षों के पश्चात अप्रशिक्षित पौध वृहत आकार के तथा अनियंत्रणीय हो जाते हैं। ऐसे पौधों में फल देने वाला हिस्सा घट जाता है तथा आंतरिक भाग पूर्णरूपेण फलरहित हो जाता है। पेड़ की छँटाई उत्पादन बढ़ाने तथा बाधाओं तथा अनावश्यक टहनियों को हटाकर पेड़ के पास सुचारू रूप से गतिविधियों (फील्ड आपरेशन) की कुल लागत को कम करने के लिए की जाती है। पौधे की वृद्धि की प्रारंभिक अवस्था में ढाँचा तैयार करने के लिए उचित ऊँचाई पर कटाई की जाती है। बहु तने वाले पेड़ों की तुलना में एक तना वाले वृक्ष के विकास हेतु छँटाई प्रारंभिक अवस्था से की जाती है।

कैनॉपी के बेहतर प्रबंधन के लिए पौधे के शीर्ष को पौध रोपण के पहले वर्ष से ही नियंत्रित करना चाहिये। पौध रोपण के दो-तीन महीने के बाद ही उन्हें जमीन के सतह से 40-50 से. मी. की समान ऊँचाई पर काटते हैं तथा कटाई के नीचे से नयी शाखायें निकलती हैं। पेड़ की मुख्य शाखा के ढाँचा बनाने के लिए तने के आसपास तीन से चार समान

चित्र 1: अतिसघन बागवानी

दूरी पर शाखाओं को रहने देना चाहिये। चुनिंदा शाखाओं को उसकी लंबाई के 50 प्रतिशत हिस्से को नीचे से परिपक्व हिस्से को छोड़कर काट देना चाहिए। कटे भाग के नीचे अनेक शाखाओं का प्रस्फुटन होता है। इन शाखाओं को 40-50 से. मी. बढ़ने देने के बाद पुनः 50 प्रतिशत छँटाई करनी चाहिये जिससे कि नयी शाखाएँ प्रस्फुटित हो सकें। यह क्रिया मुख्य रूप से पौधों को वाँछित आकार देने के लिए संपादित की जाती है। पौध रोपण के दूसरे वर्ष तक छँटाई कार्य जारी रहता है।

चित्र 2: शाखाओं को उसकी लंबाई के 50 प्रतिशत हिस्से की कटाई

चित्र 3: शाखाओं की दूसरी बार कटाई करने पर फलत

## बैक प्रूनिंग

पाँच वर्षों तक निरन्तर कटाई-छँटाई करने के बावजूद भी शाखाओं की सघनता काफी बढ़ जाती है। फलस्वरुप कैनॉपी के भीतरी भाग में सूर्य के प्रकाश का प्रवेश कम हो जाता है। इस कारण कैनॉपी के अंदरूनी भाग में फल लगना कम हो जाता है जिससे उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसके निदान हेतु अनुत्पादक शाखओं की बैक प्रूनिंग जनवरी- फरवरी माह में जमीन की सतह से 50 से 55 से. मी. उँचाई पर की जाती है। इन शाखाओं को सावधानी से तेज धार वाली आरी द्वारा काटा जाता है जिससे वह फटने न पायें। कटे भाग

चित्र 4: बैक प्रूनिंग आक्रिया एवं कटे भाग के नीचे नये कल्लों का सृजन

पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का लेप लगाया जाता है। कटे भाग के नीचे नये कल्लों का सृजन होने लगता है। इनमें से चारों दिशाओं में 4-5 स्वस्थ कल्लों को छोड़कर शेष सभी कल्लों का विरलीकरण किया जाता है। इन शाखाओं से ही नयी कैनॉपी बनती है। शाखाओं की कटाई-छँटाई तथा अन्य क्रियाएँ नये पौधों के समान ही की जाती हैं। शाखाओं की दूसरी बार कटाई करने पर पुनः फूल आने लगते हैं।

## उर्वरक/खाद

अमरूद की अतिसघन बागवानी में प्रयोग किये जाने वाले उर्वरक तथा खाद की मात्रा, पेड़ की आयु, स्थिति तथा मिट्टी के प्रकार पर निर्भर करती है। पेड़ की उचित वृद्धि तथा उससे उच्च गुणवत्तायुक्त उत्पादन की प्राप्ति के लिए उर्वरकों की निम्नलिखित मात्रा समयानुसार प्रयोग की जानी चाहिये (सारणी-2)।

**सारणी-2 : अतिसघन बागवानी (2.0 x 1.0 मी.) में उर्वरकों की मात्रा**

| वर्ष | यूरिया (ग्रा.) | | सि.सु.फॉत्र (ग्रा.) | म्यूरेट ऑफ पोटाश (ग्रा.) |
|---|---|---|---|---|
| | जून | सितंबर | सितंबर | जून |
| प्रथम | 90 | 40 | 185 | 50 |
| द्वितीय | 180 | 110 | 370 | 100 |
| तृतीय | 270 | 115 | 555 | 150 |
| चतुर्थ | 360 | 150 | 740 | 200 |
| पंचम वर्ष या अधिक आयु | 450 | 190 | 900 | 250 |

## सिंचाई

अमरूद के पौध रोपण के पश्चात प्रतिदिन हर पौध में पानी दिया जाता है। उसके पश्चात प्रारंभिक कुछ महीने तक सप्ताह में एक या दो बार सिंचाई करनी चाहिये। दीर्घकालीन शुष्क अवधि में नये अमरूद के पौधों की पहले वर्ष सप्ताह में दो बार सिंचाई करनी चाहिये। बरसात के मौसम के प्रारंभ होते ही पेड़ों की आवश्यकतानुसार सिंचाई की जानी चाहिये। दो या उससे अधिक वर्ष की आयु के अमरूद के पौधों की सिंचाई दीर्घकालीन शुष्क अवधि के दौरान उनकी वृद्धि तथा उत्पादन के लिए लाभदायक होती है। पौधों तथा फलत कल्लों के उचित विकास के लिए गर्मी के मौसम में 7 से 10 दिनों के अन्तराल तथा जाड़े में 25 दिन के अन्तराल पर सिंचाई की जानी चाहिये। यह सिंचाई मानसून के दौरान हुई बरसात के अलावा की जाती है।

## निष्कर्ष

परंपरागत बागवानी पद्धति के अन्तर्गत अमरूद की बागवानी यदि 6.0 x 6.0 मी. की दूरी (277 पौधे/हेक्टेयर) में की जाती है तो तीसरे वर्ष में 6 टन/हेक्टेयर उत्पादन की प्राप्ति होती है। यह उत्पादन पाँचवे वर्ष 15 टन/हेक्टेयर तथा सातवें वर्ष बढ़कर 27 टन/हेक्टेयर हो जाता है। अतिसघन बागवानी पद्धति किसी अन्य प्रकार की बागवानी पद्धति से अधिक लाभदायक होती है। इस पद्धति में उत्पादन पहले वर्ष से ही प्रारंभ हो जाता है। अतिसघन बागवानी में पहले वर्ष से ही औसतन 13 टन/हेक्टेयर उत्पादन की प्राप्ति होती है। दूसरे वर्ष उत्पादन बढ़कर दो गुना हो जाता है। तीसरे वर्ष के दौरान उत्पादन क्रमशः 40 टन/हेक्टेयर तथा पाँचवे वर्ष में 60 टन/हेक्टेयर हो जाता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अतिसघन बागवानी पद्धति अन्य बागवानी पद्धतियों की अपेक्षा ज्यादा लाभकारी होता है।

# अमरूद के बाग में अन्तः फसलों की खेती

सुशील कुमार शुक्ल[1]
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

मिट्टी, पानी एवं विभिन्न प्रकार की जलवायु की उपलब्धता की संपन्नता की दृष्टि से भारत विश्व के भाग्यशाली देशों में से एक है। लेकिन बढ़ती जनसंख्या के दबाव एवं संसाधनों के निरन्तर दोहन के कारण कृषि फसलों की उपज में आशा के अनुरूप वृद्धि नहीं हो पा रही है एवं मिट्टी की उर्वरा शक्ति में भी ह्रास हुआ है। अनुसंधान से यह सिद्ध हो गया है कि अगर फसलों के साथ फलदार या बहुउद्देशीय वृक्षों का समावेश किया जाये तो भूमि की उर्वराशक्ति के क्षरण को कम किया जा सकता है। इस प्रकार के समावेश से केवल फलदार वृक्षों की खेती की अपेक्षा अधिक आमदनी प्राप्त की जा सकती है। साथ ही भूमि से लम्बे समय तक टिकाऊ कृषि उत्पादन मिलता रहता है ।

देश जनसंख्या की वृद्धि को देखते हुए सन् 2050 तक इसे 160 करोड़ तक होने की सम्भावना है और लोगों की खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु लगभग 450 मिलियन टन खाद्यान्न की भी आवश्यकता पड़ेगी। वर्षा आधारित कृषि प्रणाली में भी फल वृक्षों एवं क्षेत्र विशेष के लिए उपयुक्त फसलों का समावेश कर देश के लगभग 97 मिलियन हेक्टेयर में कृषि उत्पादकता बढ़ाने की अच्छी सम्भावनायें हैं।

अमरूद को गरीबों का सेब कहा जाता है। अमरूद अपनी उच्च उत्पादकता (10-50 टन/हे.), काट छाँट, कैनॉपी प्रबंधन एवं सामान्य एवं सघन बागवानी के लिए उपयुक्तता, विटामिन 'सी' एवं प्रतिऑक्सीकारक के अच्छे स्रोत एवं बेकार भूमि में भी अच्छा उत्पादन दे सकने की क्षमता के कारण बहुत महत्वपूर्ण फल है। यह ऊसर भूमि में भी अच्छा उत्पादन देता है और काफी हद तक जलभराव को भी सहनकर लेता है।

## अन्तरासस्यन के सिद्धान्त

अन्तरासस्यन के मूलभूत सिद्धान्त निम्नवत हैं।

1. फसलों/फलों का चयन भूमि, जलवायु, क्षेत्र एवं किसान की आवश्यकतानुरूप होना चाहिये।
2. मूसला एवं झकड़ा जड़ वाली फसलों को बारी -बारी से लगाना चाहिये।
3. दलहनी एवं अन्य फसलों को भी बारी-बारी से समावेश कर लगाना चाहिये ।
4. एक ही कुल की फसलों को बारी-बारी से नहीं लगाना चाहिये ।
5. सहफसलन की ऐसी आदर्श योजना बनानी चाहिए जिससे वर्ष भर किसान के परिवार को रोजगार मिलता रहे एवं कृषि यन्त्रों की भरपूर क्षमता का प्रयोग होता रहे। साथ ही मिट्टी की उर्वराशक्ति अक्षुण्ण बनी रहे ।

[1]प्रधान वैज्ञानिक

## मिश्रित फल बाग की स्थापना

अमरूद की अन्य फलों के साथ मिश्रित बागवानी हेतु कलमी पौधों को जुलाई-अगस्त या फरवरी के महीने में 5 × 5 मी., 6 × 6 मी. या 10 × 10 मी. की दूरी पर रोपाई करते हैं। दो फल वृक्षों के बीच की दूरी कम से कम 5 मी. रखनी चाहिये। पौधे हमेशा मानकीकृत पौधशाला से ही प्राप्त करने चाहिये। पौधों की रोपाई वर्गाकार विधि से करते हैं, जिसमें पौधे से पौधे एवं पँक्ति से पंक्ति की दूरी बराबर रखी जाती है। मिश्रित बागवानी में दो फल वृक्षों को एकान्तर विधि से या प्रत्येक पौधों के वर्ग के बीच में एक अन्य पौधा भी लगाया जा सकता है। इससे बागवान अधिक लाभ के अलावा खाली पड़े क्षेत्र का भी सही उपयोग कर सकते हैं। इस विधि हेतु अन्य फलों में आम, बेर, बेल, आँवला, नींबू, पपीता, जामुन एवं शरीफा आदि के साथ मिश्रित बागवानी की जा सकती है। अमरूद की अन्य फलों के साथ सघन बागवानी हेतु पँक्ति से पँक्ति की दूरी 3 से 6 मीटर एवं पौधे से पौधे की दूरी 3 मीटर तक रखते हैं। परती (खाली) भूमि में पौध रोपण से दो मास पूर्व लगभग दो फीट व्यास का एवं तीन फीट गहरा गड्ढा ट्रैक्टर चलित पोस्ट होल डिगर से खोद लेते हैं। गड्ढ़े की मिट्टी में 25-30 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद एवं एक किलोग्राम नीम की खली या 500 ग्राम हड्डी का चूरा या 300 से 500 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट मिला कर मिश्रण तैयार कर लेते हैं। इस प्रकार से तैयार मिश्रण को गड्ढ़े में इस प्रकार से भरते हैं कि भरा हुआ गड्ढ़ा 10 से 15 से.मी. सतह से उठा रहे। क्षारीय मृदाओं में यदि पौध रोपण करना है तो उपरोक्त मिश्रण में जिप्सम आवश्यकतानुसार 5 से 8 कि.ग्रा. या पाइराइट या ऊसर तोड़ खाद एवं 20 कि.ग्रा. बालू मिला कर गड्ढ़े की भराई करनी चाहिये। यदि वर्षा न हो तो इस प्रकार से भरे गड्ढ़ों की विधिवत सिंचाई कर देनी चाहिये ताकि भरी हुई मिट्टी अपने स्थान पर बैठ जाये। गड्ढ़ों के मध्य में कलमी पौधे को पिण्डी के साथ रोपित कर देना चाहिए एवं चारों तरफ की मिट्टी को अच्छी तरह से दबा देना चाहिये। तत्पश्चात हल्की सिंचाई कर देनी चाहिये।

## काट छाँट एवं कैनापी प्रबंधन

अमरूद के नवरोपित पौधों को मिश्रित या अन्तःफसलन की आवश्यकतानुसार वाँछित ऊँचाई तक विकसित करने हेतु प्रोत्साहित करना चाहिये। नये पौधों को जमीन की सतह से आवश्यकतानुसार लगभग 75 से.मी. से 1.5 मीटर तक अकेला बढ़ने देना चाहिये। तदुपरान्त शाखाओं को निकलने देना चाहिए जिससे पौधे के ढ़ाँचे का भली प्रकार से विकास हो सके। पौधों को रूपान्तरित केन्द्रीय प्ररोह प्रणाली के अनुसार बढ़ने देना चाहिये। शुरू में अधिक कोण वाली दो से चार शाखाये विपरीत दिशाओं में निकलने देना चाहिये। अनावश्यक शाखाओं को शुरू से ही निरन्तर हटाते रहना चाहिये। इसके बाद चार से छह शाखाओं को चारों दिशाओं में बढ़ने देना चाहिये। अमरूद के फलत वाले वृक्षों में नियमित काट-छाँट की आवश्यकता नहीं होती है लेकिन नीचे की तरफ फैलने वाली ऐसी शाखाओं को जिनसे खेत में ट्रैक्टर चलाने में बाधा उत्पन्न हो, निकालते रहना चाहिये। बरसात की फसल अगर न लेना चाहें तो अप्रैल मई के महीने में ट्री प्रूनर की मदद से शाखाओं का शीर्षकर्तन एवं हल्की काट-छाँट कर

फूल एवं लगे हुए फलों को निकाल देना चाहिये। कमजोर, सूखी, रोगग्रस्त, टूटी हुई, आपस में मिली हुई शाखाओं एवं मूलवृंत्त से निकली हुई कलिकाओं को समय-समय पर निकालते रहना चाहिये। अमरूद के पूर्ण विकसित बागों में काट-छाँट इस प्रकार करना चाहिए कि अन्तःफसलों को उचित मात्रा में प्रकाश उपलब्ध होता रहे। द्विस्तरीय एवं त्रिस्तरीय मिश्रित फल खेती में इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये कि वृक्षों की केनॉपी को इस तरह से काट-छाँट कर प्रबंन्धित किया जाये कि एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा न्यूनतम हो ।

## खाद एवं उर्वरक

अमरूद की पोषकीय आवश्यकताओं पर वैज्ञानिक जानकारी सीमित है। खाद की मात्रा मुख्य रूप से मृदा उर्वरता, पौधों की आयु, सघनता एवं फसल नियमन पर निर्भर करती है। 'अमरूद के एक वर्ष के पौधे को' 5 कि. ग्रा. गोबर की खाद, 50 ग्राम नत्रजन, 25 ग्राम आवश्यकता होती है । इस मात्रा को 6 वर्ष तक समान रूप से बढ़ाकर स्थिर कर देते हैं ।

गोबर की खाद की सम्पूर्ण मात्रा तथा नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा जुलाई-अगस्त माह में फूल आने से पहले डाल देनी चाहिये। गोबर की खाद एवं अन्य खादों के मिश्रण को पेड़ की छाया के बराबर बने थालों में फैला कर हल्की गुड़ाई एवं सिंचाई कर देनी चाहिये। क्षारीय मृदाओं में उपरोक्त खाद के मिश्रण के अतिरिक्त 100 ग्राम बोरेक्स (सुहागा), 100 ग्राम जिंक सल्फेट एवं 100 ग्राम कॉपर सल्फेट प्रति वृक्ष, पौधे की आयु एवं ओज को ध्यान में रखते हुए डालना चाहिये। देश के अनेक भागों में जहाँ पर अमरूद की वर्षा एवं शरद की दोनों फसलें ली जाती हैं उपरोक्त के बराबर ही खाद एवं उर्वरकों की मात्रा फरवरी में भी डालनी चाहिये। उपरोक्त के अलावा अन्तःफसलों की आवश्यकतानुसार खाद एवं उर्वरकों की अतिरक्त मात्रा प्रयोग करनी चाहिए ।

## बाग का प्रबंधन

सामान्य रूप से अमरूद, आँवला, बेर, बेल आदि के पौधे काफी सहिष्णु होते हैं। यदि बाग सही किस्म की भूमि में स्थापित हो तो प्रायः वर्षा आधारित जल से ही सिंचाई की आवश्यकता पूरी हो जाती है और वर्षा एवं शरद ऋतु में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। परन्तु ग्रीष्म ऋतु में विशेष रूप से नये स्थापित बागों एवं उन बागों में जिनमें वर्षा ऋतु में भी फसल लेनी हो तो में कमशः 5 से 7 दिनों एवं 10 से 15 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। सिंचाई के लिये खारे पानी का प्रयोग नहीं करना चाहिये। सिंचाई के विभिन्न तरीकों में थाला विधि से सिंचाई करना सर्वोत्तम पाया गया है। फल वृक्षों के थालों को आपस में जोड़कर अन्तरासस्यन हेतु अधिकतम भूमि उपलब्ध हो सकती है । टपक सिंचाई विधि से सिंचाई करने पर लगभग 40 से 50 प्रतिशत तक पानी की बचत की जा सकती है।

बाग स्थापन में जैविक पदार्थों द्वारा अवरोध पर्त करने से अच्छे परिणाम मिले हैं। विभिन्न प्रकार के पदार्थों जैसे पुआल, केले के पत्ते, ईख की पत्ती, दलहनी एवं अन्य अन्तःफसलों से प्राप्त भूसा एवं

अन्य पादप अवशेषों से मल्चिंग की जा सकती है। जैविक पदार्थ से कई वर्षों तक मल्चिग करने से खर-पतवार नियन्त्रित रहते हैं, जड़ों का तापमान नियंत्रित रहता है, जैविक पदार्थ सड़ कर भूमि की उर्वराशक्ति तथा जल धारण करने की क्षमता को बढ़ाते हैं। इसके अतिरिक्त ये हानिकारक लवणों को जमीन की सतह पर आने से भी रोकते हैं। इस प्रकार, यह ऊसर भूमि में हानिकारक लवणों के प्रभाव को कम करते हैं, साथ ही मल्चिंग करने से पौधों की जड़ों के पास केंचुओं एवं लाभकारी सूक्ष्म जीवों की संख्या में वृद्धि भी होती है।

## सहफसली खेती के प्रकार

### 1. मिश्रित फल खेती

अमरूद के साथ मिश्रित फल खेती की अनेक सम्भावनायें हैं। फलों में आम, आँवला, बेल, बेर, पपीता, नीबू, जामुन, शरीफा, फालसा आदि के साथ अमरूद की मिश्रित खेती की जा सकती है। करौंदा को बाड़ के रूप में लगाना चाहिये । पपीता एवं नींबू की सहफसली खेती हेतु भूमि उत्तम जल निकास वाली होनी चाहिये ।

अमरूद - बेल (द्विस्तरीय खेती)

अमरूद - बेर (द्विस्तरीय खेती)

अमरूद - आँवला (द्विस्तरीय खेती)

अमरूद - जामुन (द्विस्तरीय खेती)

अमरूद - पपीता (द्विस्तरीय खेती)

अमरूद - आँवला - बेर (त्रिस्तरीय खेती)

अमरूद - आँवला - बेल (त्रिस्तरीय खेती)

अमरूद - बेर - फालसा (त्रिस्तरीय खेती)

अमरूद - बेल - फालसा (त्रिस्तरीय खेती)

### 2. अन्तरासस्यन

अमरूद या मिश्रित फल बाग के साथ अन्य फसलों की खेती की भी अनेक सम्भावनायें हैं। सब्जियों में लौकी, भिण्डी, फूलगोभी, प्याज, लहसुन, धनिया, लोबिया, हल्दी, अदरख, ज़िमीकन्द, शकरकन्द; फूलों में ग्लैडियोलस, फर्न, रज़नीगंधा, गेंदा एवं अन्य औषधीय एवं सुगंधित पौधों में सर्पगन्धा, पचौली, शतावरी, पान, तुलसी, कालमेघ, अश्वगंधा, घृतकुमारी आदि की अमरूद के साथ सहफसली खेती के रूप में अच्छी सम्भावनायें हैं। ऊसर या अपेक्षाकृत कम उपजाऊ जमीन में खरीफ ऋतु में कुछ सालों तक ढ़ैंचा या सनई की सहफसली खेती करना काफी लाभप्रद साबित हुआ है। इससे भूमि की भौतिक एवं रासायनिक गुणवत्ता में काफी सुधार होता है। देश के विभन्नि भागों में निम्नांकित अमरूद आधारित फसल प्रणालियाँ सुझाई गई है :

आँवला - अमरूद; आँवला - अमरूद - फालसा; आंवला - अमरूद - लेमनग्रास;

आँवला - अमरूद - सुबबूल; आँवला - अमरूद - सदाबहार /पेरीविंकल;

आँवला - अमरूद - मिर्च; आँवला - अमरूद - फालसा - लेमनग्रास;

आँवला - अमरूद - फालसा - लौकी

प्रयोगों में यह पाया गया कि देश के पूर्वी क्षेत्रों में आम एवं आँवला के बगीचों हेतु अमरूद सबसे अच्छी एवं कम-से-कम समय में सर्वाधिक उपज देने वाली पूरक फसल है। अमरूद की आम एवं अन्य फसलों के साथ त्रिस्तरीय खेती करने पर अमरूद के पौधों की सर्वाधिक वृद्धि स्टाइलो के साथ तथा उपज राजमा के साथ अंकित की गयी है। जबकि अमरूद की आँवला एवं अन्य फसलों के साथ त्रिस्तरीय खेती करने पर अमरूद के पौधों की सर्वाधिक वृद्धि मूंगफली और उड़द के साथ पायी गयी है और उपज धान के साथ दर्ज की गयी है।

# अमरूद के बागों में समेकित पोषण एवं जल प्रबंधन

कैलाश कुमार[1] एवं विनोद कुमार सिंह[2]
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अमरूद हमारे देश का एक अत्यंत महत्वपूर्ण फल है। ऐंटीऑक्सीडेंट से भरपूर यह विटामिन-सी, पेक्टिन, कैल्सियम और फास्फोरस का प्रमुख स्रोत है। इसे 'गरीबों का सेब' भी कहा जाता है। यह मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, तमिलनाडु, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, गुजरात और आँध्र प्रदेश में पैदा होता है। इलाहाबाद सफेदा, लखनऊ-49, सरदार, ललित, श्वेता, पंत प्रभात, हिसार सुर्खा, नागपुर सीडलजेस, धारवाड़ आदि अमरूद की प्रमुख किस्में हैं। भारत में 219.6 हजार हेक्टेयर क्षेत्र में 11.70 टन प्रति हेक्टेयर की औसत उत्पादकता के साथ अमरूद का कुल उत्पादन 2571.55 हजार टन प्रति वर्ष होता है। उत्तर प्रदेश में अमरूद की औसत उत्पादकता 12.20 टन प्रति हेक्टेयर है जो देश में सर्वाधिक है। अमरूद के फल का उपयोग खाने के अलावा जैम, जैली और नेक्टर बनाने में होता है। फलों के उत्पादन में पोषक तत्वों का महत्वपूर्ण स्थान है। इनकी कमी से पौधों की बढ़वार रुक जाती है, फलत कम हो जाती है, फल गिर जाते हैं इसके अलावा फलों का आकार छोटा हो जाता है और गुणवत्ता में कमी आ जाती है। फलों की आन्तरिक क्रियाएँ मन्द पड़ जाती हैं जिससे उनमें बहुत सी बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। फल वृक्षों की उचित वृद्धि और फलत पाने हेतु प्रारम्भ से ही अमरूद के बाग को नियमित एवं संतुलित मात्रा में खाद एवं रसायन देना आवश्यक है।

## पोषक तत्व

पौधों की वृद्धि, विकास एवं गुणवत्तायुक्त उपज हेतु कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नत्रजन फास्फोरस, पोटैशियम, कैल्सियम, मैग्नीशियम, सल्फर, लोहा, ताँबा, जस्ता, बोरॉन, मैगनीज, मालिब्डिनम और क्लोरीन 16 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इनमें से नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटैशियम मुख्य पोषक तत्व कहलाते हैं। कैल्सियम, मैग्नीशियम एवं सल्फर द्वितीयक तत्व तथा लोहा ताँबा, जस्ता, बोरॉन, मैंगनीज, मालिब्डिनम और क्लोरीन सूक्ष्म पोषक तत्व के रूप में जाने जाते हैं क्योंकि पौधों में इनकी आवश्यकता अपेक्षाकृत अत्यंत कम होती है। कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन पेड़ों को वायुमंडल तथा पानी से प्राप्त हो जाते हैं जिससे प्रायः इनकी कभी कमी नहीं होती है। नत्रजन, फास्फोरस तथा पोटाश की पेड़ों को अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है इसलिए इनकी पूर्ति देशी खाद एवं उर्वरकों द्वारा की जाती है। कैल्सियम, मैग्नीशियम तथा सल्फर की आपूर्ति अधिकाशतः नत्रजन तथा फास्फोरस की पूर्ति हेतु डाली जाने वाली कुछ खादों द्वारा अपने आप ही हो जाती है।

[1]प्रधान वैज्ञानिक एवं [2]तकनीकी अधिकारी

पौधों द्वारा भूमि से निरन्तर पोषक तत्वों के उपयोग के फलस्वरूप उसमें प्रत्येक वर्ष कमी होती रहती है। एक टन अमरूद उत्पादन के लिये बाग से प्रति वर्ष 6.0, 2.5 एवं 7.5 कि.ग्रा. नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटैशियम फलों द्वारा बाग से बाहर ले जाया जाता है। यदि इन तत्वों की कमी को बाहर से खाद एवं उर्वरकों द्वारा पूरा न किया जाये तो पेड़ अपनी पत्तियों एवं शाखाओं द्वारा उनकी कमी के लक्षण प्रकट करने लगते है। इन लक्षणों को यदि समय से पहचान कर उपचारित नहीं किया जाये तो पौधों का समुचित विकास नहीं होता है और उत्पादकता में भी काफी कमी आ जाती है।

## संतुलित उर्वरकों का प्रयोग

किसी भी फल वृक्ष से समुचित एवं गुणवत्ता युक्त पैदावार प्राप्त करने के लिए उसमें पोषक तत्वों की संस्तुत की गयी संतुलित मात्रा का प्रयोग उचित समय पर करना चाहिये। ऐसा न करने पर सभी पोषक तत्वों का अवशोषण प्रभावित होता है और अच्छे परिणाम प्राप्त नहीं होते हैं, यथा नत्रजन की कमी से फास्फोरस और पोटैशियम का अवशोषण कम हो जाता है जबकि इसकी उपस्थित में अन्य सभी पोषक तत्वों का अवशोषण बढ़ जाता है। भूमि में फास्फोरस की मात्रा अधिक देने पर जिंक, ताँबा एवं लोहे की मात्रा घट जाती है जिससे इनकी कमी के लक्षण पौधों की पत्तियों में प्रकट होने लगते हैं। इसी प्रकार पोटैशियम की मात्रा अधिक होने पर कैल्सियम एवं मैग्नीशियम की मात्रा कम हो जाती है जिससे पेड़ की बढ़वार प्रभावित होती है। अतः इन सब समस्याओं से बचने तथा भरपूर उपज प्राप्त करने हेतु खाद एवं उर्वरकों की संतुलित मात्रा का प्रयोग करना बहुत ही आवश्यक हैं जो प्रत्येक फल वृक्ष के लिए उसकी आवश्यकतानुसार अलग-अलग बतायी जाती है।

## समेकित पोषण प्रबंधन

पौधों के लिए सभी आवश्यक तत्वों की पूर्ति केवल रासायनिक उर्वरकों द्वारा नहीं हो सकती है। मिट्टी की भिन्नता के अनुसार सभी तत्वों की प्रतिपूर्ति के लिए समेकित पोषण प्रबन्धन अति आवश्यक है। इसमें उर्वरकों के साथ-साथ देशी खाद तथा जैविक उर्वरकों का प्रयोग लाभदायक सिद्ध हुआ है देशी खाद/हरी खाद एवं जैव उर्वरकों के प्रयोग से उर्वरकों की न केवल अवशोषण कुशलता में वृद्धि होती हैं बल्कि पौधों में सभी आवश्यक तत्वों का अवशोषण उचित अनुपात में होता है जिससे पौधों की वृद्धि एवं फलों की गुणवत्ता में सुधार आता है।

## पोषक तत्वों की कमी का पूर्वानुमानः मृदा एवं पर्ण/ऊतक परीक्षण

मिट्टी तथा पत्तियों में पोषक तत्वों की जानकारी उनका रासायनिक विश्लेषण कराकर कर लेना चाहिये। चूँकि अमरूद के वृक्ष बहुवर्षीय होते हैं और इनकी जड़े मिट्टी में अधिक गहराई तक तने के चारों तरफ फैली रहती है अतः अमरूद के बागों से मिट्टी परीक्षण के लिए मिट्टी के नमूने 60 से.मी. तक की गहराई से लिये जाते हैं। अमरूद के वृक्ष का खुराक खींचने वाला जड़ क्षेत्र पेड़ की छत्र-परिधि में धरातल से 30 से.मी. की औसत गहराई पर होता है।

फल वृक्षों में उपलब्ध पोषक तत्वों का स्तर ज्ञात करने के लिए फल वृक्षों से पत्तियों के नमूने

दिये गये मानको के अनुसार लेकर विश्लेषण करा लेना चाहिये। अमरूद की पत्ती का नमूना लेने के लिये ऊपर से पत्ती का तीसरा या चौथा जोड़ा चुनना चाहिये और कम से कम 30 पत्तियों का नमूना पेड़ के चारों तरफ से लेना चाहिये (सारणी 1)। प्रयोगशाला में विश्लेषण से यह ज्ञात हो जाता है कि पत्ती में पोषक तत्वों का स्तर निम्न, मध्यम या उच्च श्रेणी के किस वर्ग में आता है। पोषक तत्वों के स्तर की जानकारी के पश्चात उर्वरकों की संस्तुत मात्रा को कुछ कम या अधिक किया जा सकता है। यदि पोषक तत्वों या किसी एक तत्व का स्तर निम्न श्रेणी का है तो उनकी मात्रा अधिक और यदि स्तर मध्यम या उच्च श्रेणी का है तो खादों की मात्रा कुछ कम कर देने पर पेड़ों की समुचित वृद्धि एवं अधिक उपज प्राप्त होती है।

स्तर का सीधा संबंध पौधों की उपज एवं उसकी गुणवत्ता से होता है। पर्ण-विश्लेषण विधि अमरूद की पत्तियों में पोषक तत्वों के स्तर के आधार पर उनका पूर्वानुमान एवं सामान्य उपज के लिये उनकी

**सारणी : 2**

| पोषक तत्व | कमी | सामान्य | अधिकता |
|---|---|---|---|
| नत्रजन (%) | 1.0-1.50 | 2.0-3.0 | >3.0 |
| फास्फोरस (%) | 0.11-0.15 | 0.16-0.22 | >0.23 |
| पोटैशियम (%) | 1.20-1.60 | 1.60-2.22 | >2.22 |
| कैल्शियम (%) | <1.60 | 1.60-2.60 | >2.60 |
| मैग्नीशियम (%) | <0.29 | 0.30-0.75 | >0.75 |
| सल्फर (%) | <0.25 | 0.25-0.40 | >0.40 |
| लोहा (पीपीएम) | 50-59 | 60-250 | > 250 |
| मैगनीज (पीपीएम) | 20-29 | 30-100 | > 100 |
| जस्ता (पीपीएम) | 20-24 | 25-200 | > 200 |
| ताँबा (पीपीएम) | 3-4 | 5-20 | > 20 |
| बोरान (पीपीएम) | 17-19 | 20-70 | > 70 |

**सारणी 1: अमरूद की पत्तियों का नमूना लेने का मानक**

| नमूना हेतु ऊतक | स्थिति | आयु | समय | अवस्था | नमूने का आकार |
|---|---|---|---|---|---|
| पत्ती | ऊपर से पत्ती का तीसरा या चौथा जोड़ा | 50-60 दिन | वर्षा ऋतु की फसल के लिये जुलाई और शीत ऋतु की फसल के लिये नवम्बर | पेड़ के चारों ओर से फलने वाली शाखओं सें | 30 पत्तियाँ |

## मृदा एवं पत्ती के विश्लेषण मानक

अमरूद के लिये मृदा के विश्लेषण मानक अभी तक निर्धारित नहीं किये जा सके हैं। चूँकि पत्तियाँ पौधों की जैविक एवं रासायनिक क्रियाओं की प्रयोगशाला मानी जाती हैं अतः पोषक तत्वों की आपूर्ति स्तर में परिवर्तन से पत्तियों में पोषक तत्वों के स्तर में भी बदलाव आता है। पौधों की वृद्धि एवं विकास की कुछ मुख्य अवस्थाओं में पोषक तत्वों के संस्तुति के लिये अत्यंत महत्वपूर्ण है। अमरूद की पत्तियों में पर्ण-विश्लेषण के आधार पर पोषक तत्वों का मानक स्तर सारणी 2 में दिया गया है।

## अमरूद के लिये पोषक तत्वों की संस्तुति

अमरूद के पेड़ों में पोषण खेत में पौध लगाने के साथ ही शुरू हो जाता है। पहली बार खाद गड्ढों के भरते समय 15-20 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद

ही देनी पड़ती है। प्रयोग की जाने वाली खाद एवं रसायनों की मात्रा एवं प्रयोग का समय फसल की आवश्यकता एवं मृदा की उपजाऊ शक्ति पर निर्भर करती है। उत्तरी भारत में अमरूद की वर्षा ऋतु की फसल के लिये खाद का प्रयोग मई के प्रथम सप्ताह में तथा शीत ऋतु की फसल के लिये जुलाई के प्रथम सप्ताह में करना चाहिये। पश्चिम बंगाल में खाद का प्रयोग आधा-आधा दो बार जनवरी और अगस्त माह में किया जाता है। बेंग्लुरू में पोटैशियम की पूरी मात्रा और नत्रजन की 70% मात्रा जून में तथा फारस्फोरस की पूरी मात्रा एवं नत्रजन की 30% शेष मात्रा सितम्बर में दिये जाने की संस्तुति की गयी है। चूँकि अमरूद की 48% जड़ें मिट्टी की ऊपरी 25 से.मी. सतह में पायी जाती हैं, इसलिये बेहतर अवशोषण के लिये खाद का प्रयोग तने से 1 मी. दूर 25 से.मी. गहरी एवं 20 से.मी. चौड़ी नालियों में करना चाहिये। यदि संभव हो तो नत्रजन का प्रयोग नीम लेपित यूरिया एवं फास्फोरस का प्रयोग सिंगिल सुपर फास्फेट के रूप में करें। देश के विभिन्न भागों में अमरूद के लिये खाद/फर्टिलाइज़र की मात्रा की संस्तुति सारणी 3 के अनुसार की गयी है।

### सारणी 3. देश के विभिन्न भागों में अमरूद के लिये खाद/फर्टिलाइज़र की संस्तुति

| क्र. सं. | क्षेत्र | फर्टिलाइज़र संस्तुति |
|---|---|---|
| 1 | उत्तरी क्षेत्र | न., फा., पो. (600 ग्रा., 400 ग्रा., 400 ग्रा.) |
| 2 | पूर्वी क्षेत्र | न., फा., पो. (260 ग्रा., 320 ग्रा., 260 ग्रा.) |
| 3 | पश्चिमी क्षेत्र | न., फा., पो. (600 ग्रा., 300 ग्रा., 300 ग्रा.) |
| 4 | दक्षिणी क्षेत्र | न., फा., पो. (900 ग्रा., 600 ग्रा., 600 ग्रा.) |

अमरूद के नये एवं पुराने बागों के लिये देश के विभिन्न स्थानों के लिये फर्टिलाइज़र की संस्तुति सारणी 4 एवं 5 में की गयी है।

### सारणी 4. अमरूद के नये बागों के लिये फर्टिलाइज़र की संस्तुति

| स्थान | पेड़ की उम्र (वर्ष) | पोषक तत्वों की मात्रा (ग्रा./पेड़/वर्ष) | | |
|---|---|---|---|---|
| | | नत्रजन | फास्फोरस | पोटैशियम |
| पंत नगर | 1.2 | 75 | 65 | 50 |
| | 3 | 150 | 130 | 100 |
| | 4 | 225 | 200 | 150 |
| | 5 या अधिक | 300 | 265 | 200 |
| पंत नगर | 1.2 | 60 | 60 | 60 |
| | 3 | 120 | 90 | 90 |
| | 4 | 180 | 120 | 120 |
| | 5 या अधिक | 240 | 120 | 120 |
| लखनऊ | 1-2 | 200 | 100 | 100 |
| | 3 | 300 | 200 | 200 |
| | 4 | 400 | 300 | 300 |
| | 5 | 500 | 400 | 400 |
| | 6 | 600 | 500 | 500 |
| | 7 या अधिक | 800 | 600 | 600 |
| दिल्ली | 1-2 | 110 | 150 | 100 |
| | 3 | 220 | 300 | 200 |
| | 4 | 325 | 450 | 300 |
| | 5 या अधिक | 554 | 625 | 400 |

उत्तर प्रदेश तथा उत्तराखंड के लिये अमरूद में समेकित पोषण प्रबन्धन की संस्तुति सारणी 6 एवं 7 में की गयी है।

नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटैशियम की पूरी मात्रा जून के अंतिम सप्ताह में

सारणी 5. अमरूद के फलीय बागों के लिये फर्टिलाइज़र की संस्तुति

| स्थान | किस्में | पोषक तत्वों की मात्रा (ग्रा./पेड़/वर्ष) | | | फर्टिलाइज़र डालने का समय |
|---|---|---|---|---|---|
| | | न. | फा. | पो. | |
| बस्ती, उ.प्र. | इलाहाबाद सफेदा | 450 | 900 | 450 | जनवरी–फरवरी तथा जुलाई–अगस्त |
| बस्ती, उ.प्र. | सभी किस्में | 1130 | 630 | 750 | जनवरी–फरवरी |
| वाराणसी, उ.प्र. | इलाहाबाद सफेदा | 500 | 900 | 300 | मई–जुलाई |
| लखनऊ, उ.प्र. | सरदार | 800 | 600 | 600 | जुलाई–सितम्बर |
| पंतनगर, उत्तराखंड | सरदार | 450 | 400 | 300 | नत्रजन–पोटैशियम जुलाई और नवम्बर फास्फोरस–नवम्बर |
| | इलाहाबाद सफेदा | 360 | 180 | 180 | नत्रजन जुलाई और नवंबर, फास्फोरस + पोटैशियम, नवम्बर |
| पंजाब | इलाहाबाद सफेदा (वर्षा) | 120 | 200 | 120 | जून–सितम्बर |
| | (शीत) | 40 | 100 | 40 | |
| कल्यानी, पश्चिम बंगाल | सरदार | 260 | 320 | 260 | जनवरी–अगस्त |
| कोयम्बतूर, तमिलनाडु | सरदार | 1000 | 1000 | 1000 | जून–जुलाई और दिसम्बर |
| राहुरी, महाराष्ट्र | सरदार | 600 | 300 | 300 | जून–अगस्त |
| सबौर, बिहार | इलाहाबाद सफेदा | 490 | 562 | 375 | जून–अक्टूबर |
| राँची, झारखण्ड | इलाहाबाद सफेदा | 583 | 271 | 399 | जून–अगस्त |
| बंगलौर, कर्नाटक | सरदार | 900 | 600 | 600 | जून–सितम्बर |

तथा नत्रजन की बची हुई आधी मात्रा सितम्बर के महीने में देनी चाहिये।

गोबर की खाद एवं फास्फोरस एवं पोटैशियम की पूरी मात्रा दिसम्बर में डालनी चाहिये, नत्रजन की आधी मात्रा जून, जुलाई और शेष आधी मात्रा सितम्बर-अक्टूबर में प्रयोग करें। सुहागा का छिड़काव (0.5-1.0 प्रतिशत पानी में घोल) 15-20 दिनों में अंतराल पर जुलाई-अगस्त में दो बार करें।

**सारणी 6. उत्तर प्रदेश के लिये अमरूद में समेकित पोषण प्रबन्धन**

| पेड़ की उम्र (वर्ष) | (कि.ग्रा./पेड़/वर्ष) गोबर की खाद | पोषक तत्वों की मात्रा (ग्रा./पेड़/वर्ष) | | |
|---|---|---|---|---|
| | | नत्रजन | फास्फोरस | पोटैशियम |
| 1 | 10 | 50 | 40 | 40 |
| 2 | 10 | 100 | 80 | 100 |
| 3 | 10 | 150 | 120 | 150 |
| 4 | 15 | 200 | 160 | 200 |
| 5 | 20 | 250 | 200 | 250 |
| 6 | 25 | 300 | 240 | 300 |
| 7 | 35 | 350 | 280 | 350 |
| 8 या अधिक | 40 | 400 | 300 | 400 |

**सारणी 7. उत्तराखण्ड के लिये अमरूद में समेकित पोषण प्रबंधन**

| पेड़ की उम्र (वर्ष) | गोबर की खाद (कि.ग्रा./पेड़/वर्ष) | पोषक तत्वों की मात्रा (ग्रा./पेड़/वर्ष) | | |
|---|---|---|---|---|
| | | नत्रजन | फास्फोरस | पोटैशियम |
| 1 | 10 | 75 | 60 | 50 |
| 2 | 20 | 150 | 120 | 150 |
| 3 | 30 | 225 | 180 | 225 |
| 4 | 40 | 300 | 240 | 300 |
| 5 | 50 | 375 | 300 | 375 |
| 6 | 60 | 450 | 400 | 450 |

## जल प्रबंधन

भूमि, जल प्रबंधन, उन्नत प्रजातियाँ, फसल सुरक्षा एवं पोषण प्रबंधन फल उत्पादन के प्रमुख घटक है। जल के बिना जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती। पौधों की कोशिकाओं में पाये जाने वाले जीवद्रव्य का प्रमुख घटक जल ही है। फल वृक्षों को अन्य पौधों की अपेक्षा अधिक पानी की आवश्यकता होती है। आम के पौधों की पत्तियों में 35-95 प्रतिशत, जड़ों में 60-90 प्रतिशत तथा गूदेदार फलों में 80-90 प्रतिशत जल की मात्रा पायी जाती है। पौधों के महत्वपूर्ण कार्य जैसे प्रकाश-संश्लेषण, कार्बनिक नाइट्रोजन युक्त पदार्थों का बनना, कोशिकाओं का विभाजन एवं वृद्धि आदि पानी की सुलभता पर निर्भर करते हैं। पौधों के अंगों में पोषक तत्वों का संचालन एवं अन्य कार्यकारी क्रियाएँ जल के माध्यम से होती हैं। पानी की समुचित उपलब्धता होने पर पौधों का वानस्पतिक विकास अच्छा होता है और अच्छी गुणवत्ता वाले फल प्राप्त होते हैं। अमरूद में पानी की कमी की स्थिति में विभिन्न लक्षण प्रकट होते हैं।

## फलों का फटना

जिन फलों की वृद्धि के समय पानी की कमी रहती या फल पकने के समय पानी की अधिकता हो जाती है तो फल फटने लगते हैं।

## पुष्पन और फलन पर प्रभाव

पुष्पन और फलन पर नत्रजन तथा कार्बोहाइड्रेट का विशेष प्रभाव पड़ता है। यदि पुष्पन और फलन

के समय इन पदार्थों की कमी होती है तो पुष्प बनने की क्रिया प्रभावित होती है इसलिए पौधे में फलन के समय पानी की कमी से फल गिरने शुरू हो जाते हैं। पानी की कमी से फलों की वृद्धि रूक जाती है जिससे फल की उपज एवं गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

## फलों की गुणवत्ता पर प्रभाव

पानी की कमी होने पर फलों का आकार, रंग, स्वाद एवं गठन पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

## सिंचाई की विधियाँ

अमरूद के बागों में समान्यतः निम्न पाँच विधियों द्वारा सिंचाई की जाती है।

## थाला या बेसिन विधि

इस विधि में लाइन के हर पेड़ के चारों ओर फैलाव के अनुसार थाला बनाकर उन्हें आपस में नाली से जोड़ देते हैं फिर पूरी पँक्ति को मुख्य नाली से जोड़ देते हैं। पानी एक किनारे से थालों को भरता हुआ दूसरे किनारे तक चला जाता है। इस विधि में शुरू के पेड़ों को अधिक एवं आखिरी पेड़ों को कम पानी मिल पाता है और उर्वरक भी एक किनारे से बहकर दूसरे किनारे पहुँच जाते हैं।

## रिंग विधि

इसमें बगीचे में वृक्षों की दो लाइनों के बीच नाली बना ली जाती है फिर दोनों लाइनों के प्रत्येक पेड़ से फैलाव के अनुसार थाला बनाकर उन्हें बीच की नाली से जोड़ दिया जाता है। इस विधि में सभी पेड़ों को समान रूप से पानी मिलता है तथा पानी बहकर दूसरे पेड़ों में नहीं जा पाता पानी बर्बाद भी नहीं होता।

## बाढ़ विधि

इस विधि में पूरे बगीचों में बिना नियंत्रण के पानी बहने दिया जाता है। सिंचाई की यह विधि सर्वथा अनुचित है। इस विधि में अधिक पानी लगता है और उर्वरक भी रिसकर नीचे चले जाते हैं तथा कुछ बहकर बाग के दूसरे किनारों में चले जाते हैं।

## टपक (ड्रिप) सिंचाई प्रणाली

इस विधि द्वारा बागवान अमरूद के बागों की सिंचाई आवश्यकतानुसार संतुलित रूप में कर सकते हैं इस विधि में पेड़ के चारों ओर उसके फैलाव के अनुसार गोलाई में प्लास्टिक पाइप लगाते हैं जिससे पेड़ के आकार के अनुसार ड्रिपर लगे रहते हैं। पाइप को जल स्रोत से जोड़ने के बाद ड्रिपरों से पानी बूंद-बूंद गिरता रहता है एवं पेड़ को आवश्यकतानुसार निश्चित मात्रा में बराबर पानी मिलता रहता है और पानी बर्बाद भी नहीं होता। टपक सिंचाई द्वारा 40-45 प्रतिशत पानी की बचत करने कि साथ-साथ 42-44 प्रतिशत तक उत्पादन भी बढ़ाया जा सकता है। इस विधि में पानी के साथ उर्वरक भी दिये जा सकते हैं तब इस विधि को फर्टीगेशन कहते हैं। इस विधि से जल तथा उर्वरक दोनों की बचत होती है।

## टपक सिंचाई पद्धति से लाभ

1. पानी की बचत।
2. अधिक गुणवत्तायुक्त उत्पादन ।

3. कम श्रम लागत।
4. सिंचाई के साथ उर्वरकों व रासायनों का समुचित प्रयोग।
5. ऊंची-नीची जमीन में भी पौधों की सिंचाई।
6. खेत में मृदाक्षरण में कमी।

संस्थान में किये गये अनुसंधानों में पाया गया कि टपक सिंचाई द्वारा 40-45 प्रतिशत पानी की बचत करने के साथ-साथ 42-44 प्रतिशत तक उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

अमरूद के नये बाग लगाने पर प्रारम्भ के 2-3 वर्षों तक सिंचाई का उचित प्रबन्ध अति आवश्यक है जिससे मृदा में समुचित नमी बनी रहे और पौधों की उचित वृद्धि एवं विकास हो सके। सिंचाई की कमी होने पर पौधों की मृत्यु दर बढ़ जाती है एवं बाग की स्थापना में समय अधिक लगता है। देश के उन भागों में जहाँ पूरे वर्ष अमरूद की फसल होती है गर्मी के महीनों में आवश्यकतानुसार सिंचाई अत्यावश्यक है। अमरूद के बागों में हमेशा हल्की सिंचाई करना चाहिये जल भराव मृदा की गुणवत्ता एवं फसल दानों के लिए हानिकारक है। उत्तर भारत में बरसात की फसल के लिए गर्मी में 3-5 सिचाई अप्रैल-मई के महीने में 15 दिन के अन्तराल पर करना आवश्यक है। सर्दी की फसल के लिए अक्टूवर-नवम्बर के महीने में 15 दिन के अन्तराल पर 2-3 सिंचाई की जरूरत पड़ती है। जब अमरुद पकने प्रारम्भ हो जाए तो सिंचाई बन्द कर देना चाहिये। उस समय मृदा में नमी अधिक होने पर फलों की गुणवत्ता में कमी आती है। टपक सिचाई प्रणाली अमरूद के लिये अत्यन्त लाभकारी पायी गयी है।

# जैविक खाद, पद्धतियाँ एवं उनका अमरूद के जैविक उत्पादन में प्रयोग

राम अवध राम[1]
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

आज विश्व में कुल 370 लाख हेक्टेयर (0.7 प्रतिशत) भूमि में जैविक कृषि की जा रही है एवं जैविक उत्पादों का विक्रय 2006 में 40 बिलियन डालर तक पहुँच गया था। दिन-प्रतिदिन जैविक उत्पादों की माँग में स्वास्थ्य सुरक्षा के दृष्टकोण से वृद्धि हो रही है। भारत में मध्य प्रदेश जैविक कृषि के क्षेत्र में अग्रणी प्रदेश है जिसके कुल 1,63,230 हेक्टेयर क्षेत्रफल में सत्यापन के पश्चात जैविक खेती की जा रही है।

भारत में हरित क्रान्ति के शुभारम्भ के साथ-साथ रासायनिक उर्वरकों, कीट, व्याधि एवं खर-पतवार नाशियों का प्रयोग शुरु हुआ एवं दिन-प्रतिदिन इनके अंधाधुन प्रयोग से पर्यावरण एवं भूजल प्रदूषण में भारी वृद्धि हुई है। कृषि उत्पाद जैसे फल एवं सब्जी के उत्पादन में मुख्य रूप से रासायनों का प्रयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। फलस्वरूप मनुष्य एवं अन्य जीवों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इससे प्रदूषण के साथ-साथ उत्पादन लागत में भी वृद्धि हो रही है। मुख्यतयाः आम की फसल में किसान 5-6 बार कीटनाशी का प्रयोग करते हैं जो विश्व व्यापार संघटन एवं स्वास्थ्य संबंधी मापदंड से अधिक है। अतः भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि वायुमण्डलीय प्रदूषण एवं लागत खर्च की कमी हेतु जैविक खेती आत्महत्या करने वाले कृषकों के लिये आशा की अंतिम किरण बन चुकी है।

प्राचीन काल से ही भारत में जैविक कृषि का प्रचलन रहा है तथा आज भी विभिन्न प्रदेशों में कृषक विभिन्न जैविक खेती की विधाओं का प्रयोग कर रहे है जिनका विवेचना निम्नलिखित है।

1. बायोडायनमिक खेती,
2. पंचगव्य कृषि,
3. ऋषि खेती,
4. नेतिको कृषि,
5. प्राकृतिक कृषि।

उपरोक्त विधाओं के समन्वयन से निम्नलिखित उद्देश्यों की प्रतिपूर्ति की जा सकती है।

1. उत्पादन क्षमता रासायनिक खेती के बराबर या अधिक हो।
2. भूमि की पोषक क्षमता में निरन्तर वृद्धि हो।
3. उत्पादन गुणवत्ता में वृद्धि हो।

[1]प्रधान वैज्ञानिक

4. सभी प्रकार की खादों, कीटनाशकों एवं व्याधिनाशकों का गाँवों/खेतों पर उत्पादन हो।
5. तकनीक सस्ती एवं प्रदूषण रहित हो।

## जैविक खादों के प्रकार

विभिन्न फसलों के लिए विभिन्न प्रकार की जैविक खादें प्रयुक्त होती हैं जिनका चयनित प्रयोग आवश्यक होता है।

1. नाइट्रोजन स्थिरीकारक सूक्ष्मजीव
2. फॉस्फोरस घोलक सूक्ष्मजीव
3. माइकोराइजा

### 1. स्थिरीकारक सूक्ष्मजीव

*एजेटोवैक्टरः* इन सूक्ष्म जीवों को सहजीवन की आवश्यकता नहीं होती हैं तथा ये भूमि में उपस्थित कार्बनिक श्रोतों से ऊर्जा प्राप्त करते हैं एवं वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को भूमि में प्रतिस्थापित करते हैं। इनका प्रयोग दलहनी फसलों के अलावा सभी फसलों में किया जा सकता है जिनके उत्पादन में अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती है। नाइट्रोजन स्थिरीकरण के अतिरिक्त ये जीवाणु विभिन्न हारमोन्स, सूक्ष्म तत्व एवं विटामिनों को मुक्त करते हैं। एजेटोवैक्टर के प्रयोग से औसतन 20-40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन भूमि में प्रतिस्थापित होती है तथा उत्पादन में लगभग 30 प्रतिशत तक वृद्धि होती है।

*एजोस्पाइरिलमः* यह गौड़ सहजीवी जीवाणु है जो पौधों की जड़ों में घर बनाकर वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करते हैं। इन जीवाणुओं की क्रियाशीलता लवणीय मृदा में भी बनी रहती है। *एजोस्पीरिलम* युक्त जैविक खाद के प्रयोग से लगभग 20-30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रतिस्थापित होती है तथा उत्पादन में लगभग 10- 25 प्रतिशत तक वृद्धि होती है। *एजोस्पाइरिलम* का प्रयोग उन सभी फसलों के लिए किया जा सकता है (दलहनी फसलों को छोड़कर) जिनके उत्पादन में पानी की निरन्तर आवश्यकता नहीं होती है।

### 2. फास्फोरस घोलक सूक्ष्मजीव

मुख्यतयाः भारतीय मृदाओं में फास्फोरस की कमी पायी जाती है। जिसका प्रमुख कारण यह है कि फॉस्फोरस की प्रयुक्त कुल मात्रा का 30 प्रतिशत ही पौधों को उपलब्ध हो पाता है बाकी विभिन्न यौगिकों में परिवर्तित हो जाता है जिसका पौधे उदग्रहण नहीं कर सकते हैं। अतः इस अनुपलब्ध मात्रा को उपलब्ध दशा में परिवर्तित करने वाले जीवाणुओं को फास्फोरस घोलक सूक्ष्मजीव कहा जाता है। इसके अतिरिक्त ये जीवाणु कैल्सियम, एलुमिनियम, लोहा एवं मैग्नीशियम जैसे सूक्ष्म तत्वों को भी उपलब्ध अवस्था में परिवर्तित करने का कार्य करते हैं। जिसके फलस्वरूप पौधों के विकास एवं उत्पादन में वृद्धि होती है।

### 3. माइकोराइजा

माइकोराइजा पौधों की जड़ों के सहयोग से फॉस्फोरस, जस्ता, ताँबा, मैंगनीज एवं लोहे के उदग्रहण में वृद्धि करता है फलस्वरूप पौधों के विकास एवं उत्पादन में वृद्धि होती है। माइकोराइजा की सरल रूप से अनुपलब्धता ही इसके प्रचलित प्रयोग में सबसे बड़ी रुकावट है। फास्फोरस की कमी वाली भूमि में माइकोराइजा का प्रयोग उपयुक्त पाया गया है।

## जैविक खादों का अमरूद के वृक्षों पर प्रयोग

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ में फलों पर विभिन्न कार्बनिक स्रोतों एवं जैविक खादों के प्रयोग से उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई।

अमरूद की प्रजाति इलाहाबाद सफेदा के 6 वर्षीय पौधों पर एक दीर्घकालीन प्रयोग में 6 कि.ग्रा./वृक्ष नीम की खली के प्रयोग से उत्पादन (45.64 कि. ग्रा./वृक्ष) एवं गुणवत्ता (कुल घुलनशील तत्व 13.4$^0$ ब्रिक्स एवं विटामिन सी 220.43 मि.ग्रा. 100 ग्रा. फल) में वृद्वि पायी गयी।

एक अन्य प्रयोग में इलाहाबाद सफेदा के 5 वर्षीय पौधों में 20 कि.ग्रा. गोबर की खाद प्रति वृक्ष एवं 250 ग्रा. *एजेटोवैक्टर* के प्रयोग से फलोत्पादन 40 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष एवं गुणवत्ता (कुल घुलनशील तत्व 16.20$^0$ ब्रिक्स) में सकारात्मक सुधार पाया गया।

## जैविक खेती की पद्धतियाँ

प्राचीनकाल से भारत में जैविक कृषि का प्रचलन रहा है तथा आज भी विभिन्न प्रदेशों में कृषक विभिन्न जैविक खेती की विधाओं का प्रयोग कर रहे हैं।

## बायोडायनमिक खेती

भूमि की उर्वराशक्ति एवं सूक्ष्म जैव शक्ति को ब्रहमाण्डीय शक्तियों से उत्प्रेरित कर उत्पादन एवं गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी करने की एक सम्पूर्ण पद्धति है। बायोडायनमिक कृषि में कृषि पंचांग का प्रयोग कर उत्पादन में वृद्धि लायी जा सकती है। पौधों में वृद्धि, कीट एवं व्याधि प्रबंधन हेतु निम्न उत्प्रेरकों का प्रयोग किया जाता है।

## बायोडायनमिक कम्पोस्ट

खेतों पर उपलब्ध सूखी तथा हरी घासों इत्यादि का प्रयोग कम्पोस्ट बनाने हेतु किया जाता है। उचित नमी एवं तापमान होने पर करीब 75-90 दिनों में पर कम्पोस्ट तैयार हो जाती है। कम-से-कम गोबर में गोबर की खाद से 2.5-3.0 गुना अधिक पौष्टिक खाद बनती है। फलस्वरुप 10-12.5 टन कम्पोस्ट की मात्रा प्रति हेक्टेयर के लिए पर्याप्त होती है।

## नादेप कम्पोस्ट

इन्दौर के एक किसान ने हवादार तरीके से खाद बनाने की विधि का विकास किया जिसको नादेप कम्पोस्ट विधि कहते हैं। 90-120 दिनों (जुलाई-अक्टूबर) में खाद तैयार हो जाती है। कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाने हेतु बायोडायनमिक कम्पोस्ट की भाँति चूना, राख, राक फास्फेट इत्यादि डालकर तथा तैयार होने के बाद जैव कारकों का प्रयोग कर अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

## केंचुए की खाद (वर्मीकम्पोस्ट)

वर्मीकल्चर जैव तकनीक केचुओं द्वारा विष रहित कार्बनिक पदार्थों द्वारा खाद बनाने की क्रिया है। फलस्वरूप मृदा में लाभदायक सूक्ष्मजीवों में वृद्धि, बीमारी फैलाने वाले सूक्ष्मजीवों में कमी एवं भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि होती है। भारतीय केंचुआ खाद बनाने के लिए उपयुक्त पाया गया है। इस प्रजाति में विभिन्न प्रकार के तापमान एवं आर्द्रता को सहन

करने की क्षमता पायी जाती है। वर्मी कम्पोस्ट की पौष्टिकता प्रयुक्त खाद्य पदार्थों पर निर्भर करती है।

## वर्मीवॉश

वर्मीवाश (तरल खाद) ड्रम/मिट्टी के बड़े बर्तन में रखे केंचुओं की अधिक संख्या से बनाया जाता है। तरल में मुख्य एवं सूक्ष्म तत्वों के अलावा हारमोन एवं विटामिन भी पाये जाते हैं। वर्मीवॉश का प्रयोग फलों एवं सब्जियों की फसलों में वृद्धि एवं अधिक उत्पादन हेतु किया जाता है।

## कीट एवं व्याधियों का नियंत्रण

बायोडायनमिक खेती में कीट एवं व्याधियों का नियन्त्रण बायोडायनमिक विधि से तैयार तरल कीटनाशक एवं उत्प्रेरकों द्वारा किया जाता है जिसका वर्णन निम्नांकित है।

## बायोडायनामिक तरल खाद एवं कीटनाशी

यह दलहनी पौधों एवं नीम की पत्तियों, मछली के कचरे, अरण्डी, करंज, मदार एवं सदाबहार आदि की पत्तियों द्वारा बनाया जाता है। विभिन्न प्रकार के कीटनाशी पौधों से तैयार तरल का बायोडायनमिक पंचांग के अनुसार छिड़काव से फलोत्पादन पर कीट एवं व्याधियों का नियंत्रण किया जा सकता है। इस प्रकार बायोडायनमिक खादों एवं उत्प्रेरकों का प्रयोग कर रासायनों के प्रयोग में कमी, उत्पादन में वृद्धि एवं विभिन्न प्रकार के हवा एवं जल प्रदूषण में कमी लायी जा सकती है।

## पलवार (विछावन)

पलवार से भूमि में विद्यमान नमी को वाष्पीकरण से रोकथाम, खर-पतवार का प्रभावी नियंत्रण, भूमिक्षरण की रोकथाम, पौधों के मूलतन्त्र के आसपास उचित नमी तथा तापमान बनाये रखने में सहायता मिलती है। जैविक पदार्थों का नियमित रूप से पलवार के रूप में प्रयोग करते रहने से भूमि की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशा में उत्तरोतर सुधार होता है केंचुओं तथा सूक्ष्मजीवों की संख्या तथा गतिविधियों को प्रोत्साहन तथा बढ़वार कर रहे फलों के गिरने में कमी, अधिक तथा उच्चगुणवत्ता युक्त उत्पादन होता है।

## पंचगव्य कृषि

पंचगव्य का प्रयोग प्राचीनकाल से मानव स्वास्थ्य हेतु किया जाता रहा है। आजकल विशेषकर तमिलनाडु राज्य में कृषि, मनुष्य तथा पशुओं के स्वास्थ्य हेतु भी इसका उपयोग किया जा रहा है।

गाय का गोबर, गोमूत्र, स्लरी, दूध, दही, घी, गन्ने का रस, नारियल पानी, पके केले एवं ताड़ी को निश्चित मात्रा में मिलाकर पंचगव्य तैयार किया जाता है।

## ऋषि खेती

यह जैविक विधि श्री मोहनशंकर देशपांडे द्वारा विकसित की गयी है। इसका प्रयोग महाराष्ट्र तथा मध्य प्रदेश में हजारों कृषक कर रहे हैं। इस विधि में बरगद के पुराने वृक्ष के दायरे से 15-20 कि.ग्रा. मिट्टी बुआई पूर्व खेत में प्रति एकड़ की दर से

बिखेर कर तैयारी की जाती है। तत्पश्चात गोबर, घी एवं शहद से अमृत पानी बनाया जाता है।

अमृत पानी के 5 प्रतिशत घोल का पर्णीय छिड़काव या सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग अत्यन्त प्रभावी पाया गया है। ऋषि कृषि में खर-पतवार नियंत्रण हेतु निराई, अवरोध पर्त (मल्चिंग) एक प्रचलित प्रथा है।

अमरूद की किस्म इलाहाबाद सफेदा पर विभिन्न जैविक पद्धतियों से संबंधित एक प्रयोग में, 250 ग्राम बरगद के वृक्ष की मिटटी + अमृत पानी के 5 प्रतिशत घोल एवं जैविक पलवार बिछाने (ऋषि कृषि पद्वति) से 41-45 कि.ग्रा./वृक्ष उत्पादन पाया गया जबकि 30 कि.ग्रा. बायोडायनमिक कम्पोस्ट प्रति वृक्ष के प्रयोग से 30 कि.ग्रा. फलोत्पादन पाया गया। फलों की गुणवत्ता में सुधार (कुल घुलनशील तत्व 11.3° ब्रिक्स) बायोडायनमिक पद्धति में पाया गया।

## अमरूद के बायोडायनमिक उत्पादन का क्रमबद्ध विवरण

### 1. पोषक तत्व प्रबंधन

- तीस कि.ग्रा. प्रति हे. नादेप/ बायोडायनमिक/ वर्मी/खाद का जुलाई अगस्त में थाले में प्रयोग।
- वर्षा ऋतु में सनई/ढैंचा को हरी खाद के लिए उगाना।
- थाले में बी. डी. 500 एवं सी. पी. पी.(100 ग्राम) का चन्द्र के दक्षिणायण में छिड़काव ।
- बिछावन का प्रयोग।
- आवश्यकतानुसार बायोडायनमिक तरल खाद एवं वर्मीवॉश का पौधों की वृद्धि हेतु पंचांग के अनुसार प्रयोग ।

### 2. कीट एवं व्याधि प्रबंधन

- नीम/करंज/अरण्डी/कनेर/धतूरा/मदार से बनी बायोडायनमिक तरल कीटनाशी का 2-3 पर्णीय छिड़काव पंचांग के अनुसार ।
- बी. डी. 501 का दो छिड़काव फूल एवं फलों के लगने के समय पंचांग के अनुसार।
- झाउ/हार्स टेल की पत्तियों द्वारा तैयार तरल का बौर आने या फफूँद जनित बीमारियों के प्रकोप पर एक छिड़काव ।
- फलमक्खी के नियंत्रण हेतु फीरोमोन ट्रेप का प्रयोग।

# अमरूद में समेकित नाशीकीट प्रबंधन

आर. पी. शुक्ल[1]
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अमरूद उत्पादन की अनेक नवीन तकनीकें हाल में विकसित की गयीं हैं और इन्हीं तकनीकों को किसान अपना रहे हैं। इन तकनीकों को अपनाये जाने तथा केवल अमरूद के ही बाग लगाये जाने के कारण कीटों का प्रकोप बढ़ा है। जो कीट पहले कम हानि पहुँचाते थे वे अब मुख्य कीटों की श्रेणी में आ गये हैं। लगभग 80 कीटों की प्रजातियाँ अमरूद के बागों को हानि पहुँचाती हैं जिससे अमरूद की उत्पादकता एवं गुणवत्ता दोनों ही प्रभावित हो रही हैं। इन कीटों में फल मक्खी, फल भेदक, छाल-भक्षी कीट, मीली बग एवं शल्क कीट मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त सफेद मक्खी, माहूँ, थ्रिप्स, तना-भेदक, पत्ती खाने वाले कीट आदि गौड़ कीट भी बहुतायत में होने की स्थिति में काफी हानि पहुँचाते हैं।

## फल मक्खी (बैक्ट्रोसेरा प्रजातियाँ)

अमरूद के उत्पादन में फल मक्खी सबसे अधिक हानिकारक कीट है। वर्षा ऋतु के मौसम में यह और अधिक हानि पहुँचाती हैं। कई प्रकार की फल मक्खियाँ अमरूद के फल को हानि पहुँचाती हैं। ये हैं बै. कोरेक्टा, बै. डारसैलिस एवं बै. जोनेटा। ये नाशी कीट (फल मक्खी) सम्पूर्ण देश में व्यापक तौर पर पायी जाती हैं एवं अनेक प्रकार के फलों पर पलती हैं और तथा आर्थिक महत्व की हैं। पकते फलों में मक्खी अंडा देती हैं और मैगट गूदे को खाते हैं। प्यूपा जमीन के अन्दर बनता है। उत्तरी भारत में, आम की फसल की तुड़ाई के बाद ये फल मक्खियाँ अमरूद पर आ जाती हैं और इनकी संख्या जुलाई-अगस्त में सबसे अधिक होती है। इसके बाद इनकी संख्या घटती है।

फल मक्खी

## प्रकोप के लक्षण

अंडे देने के कारण अमरूद के फलों पर हुई क्षति को बहुत छोटे गड्ढों के रूप में देखा जा सकता है। ग्रसत स्थान पर फल मुलायम पड़ जाते हैं। प्रभावित फल सड़ जाते हैं और पकने से पहले ही गिर जाते हैं। अंडे दिये जाने के कारण बने छिद्रों द्वारा फलों पर कई रोगकारकों का संक्रमण हो जाता है।

## प्रबंधन

- फल मक्खी ग्रसित फलों को मैगट सहित एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिये।

[1]प्रभागाध्यक्ष (फसल सुरक्षा)

- पेड़ के थालों की गुड़ाई करनी चाहिये ताकि सुसुप्तावस्था में गये प्यूपा ऊपर आ जायें और प्राकृतिक शत्रुओं द्वारा नष्ट कर दिये जायें।
- बागों में प्लाईवुड के टुकड़ों (5x5x1 सें.मी.) को अल्कोहल, मिथाइल यूजीनाल एवं मेलाथियान (6:4:1) के घोल में दो दिन तक डुबोकर 10 ट्रेप/हेक्टर की दर से पेड़ों पर लटकाने से नर मक्खियाँ आकर्षित होकर मर जाती हैं।

## छालभक्षी कीट (*इन्डरबेला टेट्राओनिस एवं इ. क्वाड्रीनोटेटा*)

यह नाशीजीव मुख्य तनों और शाखाओं में छेद करता है और छाल को खाता है। यह कीट देशव्यापी है और बहुत से फल, फूलों एवं वन वृक्षों को क्षति पहुँचाता है। अमरूद के बागों में यह सामान्यतः पाया जाता है। यह नाशीकीट सामान्य तौर पर उन बागों में अधिक पाया जाता है जो उपेक्षित होते हैं और जिनकी ठीक से देख-भाल नहीं की जाती है। इस कीट का प्रकोप अप्रैल महीने से माथ (उवजी) निकलने के साथ प्रारंभ होता है। इसके गिडार प्ररोहों, शाखाओं एवं मुख्य तने में छेद करते हैं। ये दिन में इन आवासीय छिद्रों में रहते हैं तथा रात को बाहर आते हैं और छाल को खाते हैं। प्यूपा मुख्य तने में रहता है। अधिक प्रकोप होने पर पेड़ों की वृद्धि रुक जाती है एवं पुष्पन और फलत प्रभावित होती हैं।

छालभक्षी कीट

## प्रकोप के लक्षण

इसके प्रकोप की पहचान गिडार द्वारा प्ररोहों, शाखाओं एवं तनों पर बनायी गयी अनियमित सुरंगों से होती है जो रेशमी जालों, जिसमें चबायी हुई छाल के टुकड़े और इनके मल सम्मिलित होते हैं, से ढ़की होती हैं। इनके आवासी छिद्र विशेष कर प्ररोहों एवं शाखाओं के जोड़ पर देखे जा सकते हैं । नये प्ररोह सूख कर मर जाते हैं जिससे पेड़ बीमार सा दिखता है।

## प्रबंधन

- बाग को साफ-सुथरा और स्वस्थ रखना चाहिये।
- समय-समय पर बागों में जा कर नये, सूखे प्ररोहों की जाँच करनी चाहिये ताकि शीघ्र ही इस कीट के प्रकोप का पता लग सके।
- प्रकोप के शुरूआत में ही आवासी छिद्रों को साफ कर, उनमें तार डाल कर गिडार को नष्ट कर देना चाहिए।
- अधिक प्रकोप होने पर सुरंगों एवं आवासीय छिद्रों को साफ कर रूई के फाये को 0.25 से 0.5 प्रतिशत डाईक्लोरवास के घोल में भिगो कर छिद्रों में रख कर गीली मिट्टी से बन्द कर देना चाहिये ।

- इसके गिडार बिवेरिया बैसियाना नामक फफूँद से प्राकृतिक रूप से ग्रसित होते हैं। इस रोगकारक फफूँद की पहचान सम्भावित जैविक नियन्त्रण कारक के रूप में की गयी है।

## फल भेदक

### (i) अनार तितली *ड्यूडोरिक्स* (विइरेकोला) *आइसोक्रेट्स*

अनार तितली द्वारा अमरूद के फलों में आन्तरिक हानि

अनार तितली अनार का प्रमुख नाशी कीट है किन्तु हाल ही में इस कीट का प्रकोप उत्तर प्रदेश में अमरूद की पैदावार वाले क्षेत्रों और उत्तर भारत के और दूसरे स्थानों में बढ़ता हुआ पाया गया है। इस नाशी कीट का प्रकोप अमरूद में वर्षा एवं शीत ऋतु की फसलों में होता है। बैंगनी-भूरी सी मादा तितली, एक-एक कर चमकदार, सफेद अण्डे फूलों के कैलिक्स और फलों पर देती है। गिडार फल को भेदते हैं और गूदे एवं बीज को खाकर इसे अन्दर से खोखला कर देते हैं।

यह मजबूत शरीर वाले चपटे, छोटे बालों से ढके हुए लगभग 2 से.मी. तक लम्बे होते हैं। पूर्ण विकसित गिडार बाहर आकर बाहरी छेद के पास या अन्दर ही प्यूपा में परिवर्तित हो जाता है। इस कीट के द्वारा फल खराब हो जाते हैं तथा हानि होती है। गिडार के अन्दर घुसने और बाहर आने वाले छिद्रों से फलों में विभिन्न रोगाणुओं का संक्रमण भी हो जाता है।

### (ii) कैस्टर कैप्सूल भेदक (*कोनाजेथीस पन्कटीफिरेलिस*)

यह एक दूसरा बहुभक्षी कीट है जिसके गिडार अमरूद के फल को हानि पहुँचाते हैं। यह प्राथमिक तौर पर अण्डी का नाशीकीट है किन्तु अमरूद और दूसरे फलों एवं वन वृक्षों को भी हानि पहुँचाता है। इस माथ (उवजी) के गिडार फल भेदक हैं लेकिन ये कलियों और मुलायम प्ररोहों को भी भेदते हैं। इसके पूर्ण विकसित गिडार गुलाबी रंग के होते हैं जिस पर छोटे काले धब्बे होते हैं। गिडार बढ़ते हुए फल के गूदे और बीजों को खाते हैं जिससे फल पकने से पहले ही गिर जाते हैं। फल के निचले हिस्से में प्यूपा-कोष्ठ में प्यूपा बनता है। इस नाशीकीट का प्रकोप वर्षा ऋतु नाशी फसल में होता है।

## प्रकोप के लक्षण

प्रभावित फल का रूप गिडार के अन्दर जाने वाले छिद्र के पास से खराब हो जाता। गिडार द्वारा छिद्रों से विसर्जित मल निकलता हुआ देखा जा सकता है । ऐसे फल कमजोर हो जाते हैं, सड़ जाते हैं और गिर जाते हैं।

## प्रबंधन

- अमरूद के बाग के पास अनार का बाग नहीं लगाना चाहिये क्योंकि इस नाशीकीट का यह सबसे अधिक पसंद परपोषी है।
- ग्रसित फलों को नियमित रूप से एकत्र कर नष्ट करना चाहिये जिससे इसके प्रकोप को और फैलने से रोका जा सके।

- इस कीट की रोकथाम के लिए फल के मौसम के प्रारम्भ में और फलों के पकने से पहले 0.2 प्रतिशत कार्बेरिल का छिड़काव करना चाहिये। प्रकोप की अधिकता होने पर दोबारा छिड़काव 15 दिनों के अन्तराल पर किया जा सकता है। अन्तिम छिड़काव के बाद कम से कम 15 दिनों के बाद ही फलों को तोड़ना चाहिये।

## टी मास्क्यूटो बग (*हेलोपोल्टिस एन्टोनाई*)

यह प्रमुखतया काजू को हानि पहुँचाने वाला कीट है जो काजू उत्पादन क्षेत्रों में पाया जाता है। यह कीट अंगूर, अमरूद और आम के बागों को भी हानि पहुँचाता है। इसका प्रकोप जून से फरवरी में शुरू होकर सितम्बर से नवम्बर तक अधिक होता है। इसके निम्फ और वयस्क मुलायम पत्तियों, शाखाओं और फलों का रस चूसते हैं जिससे पत्तियों में भूरे धब्बे पड़ जाते हैं जो सूख जाते हैं। भूरे और काले रंग के धब्बे फूलों की कलियों में पाये जाते हैं। और फलों पर स्केल बन जाते है। वयस्क छोटे तथा उनका शरीर लम्बा (7-9 मि.मी.) और टांगें तथा एन्टीना भी लम्बा होता है। निम्फ बालों सहित, सफेद और चीटीं जैसे होते हैं।

## प्रबंधन

- बागों को साफ सुथरा रखें।
- अधिक प्रकोप होने पर डायमेथोएट (0.06 %) का 15 दिन के अन्तराल पर दो छिड़ाकव करें।

## गुजिया कीट एवं शल्क कीट

उपर्युक्त नाशीकीटों के अतिरिक्त कई प्रकार के काक्सिड भी अमरूद की पत्तियों, प्ररोहों एवं फलों पर पाये गये हैं। इनमें से कुछ ही नियमित रूप से अमरूद पर प्रकोप करते हैं। शेष कीट यदा-कदा

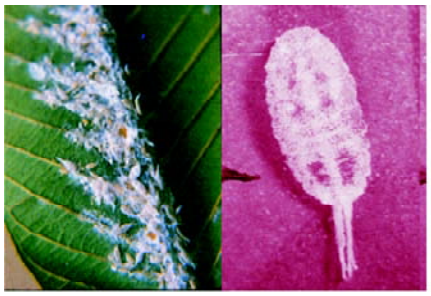

धारीदार मीली बग

मीली बग आम का मीली बग

गुलाबी मीली बग

नींम्बू का मीली बग

ओरियंटल मीली बग

प्रकोप करते देश के विभिन्न भागों में देखे गए हैं। सामान्यतः पायी जाने वाली प्रजातियाँ हैं, *क्लोरोपल्वीनेरिया साईडी, ड्रासीचा मैन्जीफेरी, फेरेसिया विरगेटा, हेमीएसपीडिओप्राक्टस सीनेरस, नाइपीकाकस वाइरोडिस, प्लेनोकाकस सीट्राई, सेसेटिया ओली, से. काफी* आदि। इसमें से *क. साईडी* मुख्य प्रजाति है जो केन्द्रीय एवं दक्षिण भारत में अमरूद की फसल को गम्भीर हानि पहुँचाती है।

*नाईपीकाकस वाइरीडिस* फलों पर एवं *फेरेसिया विरगेटा* का पत्तियों और प्ररोहों पर प्रकोप यदा-कदा उत्तर भारत में पाया गया है। कभी-कभी *फे. विरगेटा,* विशेष कर छोटे पौधों में, अधिक संख्या में आता है। इसके व्यस्क सफेद, चमकदार, मोम के धागे उत्सिर्जित करते हैं जो शरीर को घेरे रहते हैं। शरीर मोमी-चूर्ण से ढ़का होता है। अण्डे समूहों में अण्डों की थैली में दिए जाते हैं। निम्फ अण्डों से निकलने के बाद पत्तियों एवं प्ररोहों का रस चूसते हैं। सामान्यतः इन कीटों का प्रकोप ग्रीष्म ऋतु में होता है। आम के चूर्णी बग, *ड्रासीचा मैन्जीफेरी,* का प्रकोप शीतकालीन अमरूद की फसल में देखा गया है। निम्फ पत्तियों, प्ररोहों और फलों का रस चूसते हैं। इन कीटों द्वारा विसर्जित मधु के कारण प्रभावित भागों पर काली फफूँद (सूटी मोल्ड) पनपती है। इससे ग्रसित फल समय पूर्व गिर जाते हैं एवं परिपक्व फल का बाजार भाव घट जाता है।

## प्रकोप के लक्षण

अत्यधिक रस चूसे जाने के कारण पत्तियाँ पीली हो कर मुरझा जाती हैं और सूख कर झड़ जाती हैं। नये प्ररोह सूख जाते हैं और प्रभावित फल गिर जाते हैं। इन कीटों द्वारा विसर्जित मधु पर काली फफूँद का संक्रमण होने के कारण पेड़ की प्रकाश संशलेषण क्रिया बाधित होती है।

## प्रबंधन

- प्रभावित पत्तियों और नये प्ररोहों को काट कर कीड़ों सहित नष्ट कर देना चाहिये। इससे नाशीकीट की प्रारम्भिक संख्या में कमी आती है और यह आगे नहीं फैल पाता।
- बहुत घनी और एक-दूसरे पेड़ों को छूती हुई शाखाओं को काट-छाँट देना चाहिये।
- शल्क कीट के अधिक प्रकोप होने पर 0.06 प्रतिशत डाइमेथोएट का छिड़काव फल के मौसम के प्रारम्भ में या फल का मौसम न होने पर करने की संस्तुति की जाती है। प्रकोप की अधिकता होने पर दोबारा छिड़काव 15 दिनों के अन्तराल पर किया जा सकता है।
- गुजिया कीट से बचाव और नियन्त्रण के लिए 400 गेज की 25 से.मी. चौड़ी पॉलीथीन की पट्टी सुतली की सहायता से पेड़ के तने पर बाँधना चाहिये। 1.5 प्रतिशत क्लोरपाइरीफॉस चूर्ण 250 ग्राम प्रति पेड़ की दर से पेड़ के चारों तरफ मिट्टी

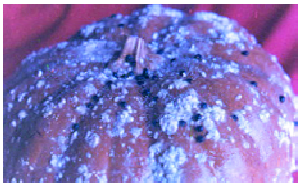

क्रिप्टोलीमस वयस्क पीटिल

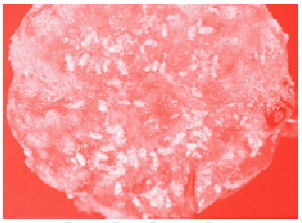

कद्दू को खाते हुये क्रिप्टोलीमस ग्रव

की गुड़ाई कर प्रयोग कर सकते हैं। ऐसा विशेष कर उस समय अवश्य करना चाहिये जब अमरूद का बाग आम के बाग के पास हो।

- परभक्षी *क्रिप्टोलीमस मोन्टरोजेरी* को 10 ग्राम प्रति पेड़ की दर से पेड़ों पर छोड़ने से इन मीली बग के प्रकोप में काफी कमी की जा सकती है।

## माहू (*एफिस गासीपाई*)

इसका प्रकोप अमरूद की नयी पत्तियों पर होता है और यह रस चूस कर पत्तियों और प्ररोहों के अग्रभाग को हानि पहुँचाते हैं हालाँकि ये गम्भीर हानि नहीं करते। कई प्रकार के कीट विशेष कर *सिरफिड* एवं *काक्सीनेलिड* परभक्षी कीट प्रकृति में इनकी संख्या को बढ़ने से रोकते हैं।

## प्रकोप के लक्षण

मुरझाई और झुकी हुई पत्तियाँ इस कीट का प्रकोप होना इंगित करती हैं। चीटियाँ भी इस नाशीकीट के साथ पायी जाती हैं।

## प्रबंधन

- प्रकोप के प्रारम्भ में ही प्रभावित पत्तियों और प्ररोहों को काट कर कीटों सहित नष्ट कर देना चाहिए। अधिक प्रकोप होने पर 0.06 प्रतिशत डायमैथोएट का छिड़काव करना चाहिये।

## सर्पिल सफेद मक्खी (*एलियूरोडिकस डिस्परसर्स*)

इस कीट का प्रकोप भारत में सर्वप्रथम केरल में 1993 में प्रकोप देखा गया था। इसके उपरांत इसका प्रकोप बैंगलोर, धारवाड़ और महाराष्ट्र में पाया गया। इस कीट का प्रकोप बैंगलोर में मार्च से

स्पाईरेलिंग सफेद मक्खी

जून तथा महाराष्ट्र में जुलाई-अगस्त तथा नवम्बर से मार्च में अधिक होता है। मादा कीट द्वारा अंडे पत्तियों की निचली सतह पर सर्पिल आकारमें दिये जाते हैं जिनसे लार्वा निकलते हैं जिनमें 3 इन्सटार होते हैं और चौथा इन्सटार प्री प्यूपा में बदल जाता है। वयस्क निकलते समय साफ होता है लेकिन कुछ ही घंटे में इसके ऊपर सफेद चूर्ण पैदा हो जाता है। इसके निम्फ और वयस्क पत्तियों का रस चूसते हैं जिससे पत्तियाँ गिर जाती हैं और फूल तथा फल कम आते हैं। पत्तियों की निचली सतह में सफेद रूई की तरह परत जम जाती है। यह एक तरह का मीठा श्राव छोड़ता है जिस पर सूटीमोल्ड का वर्धन होता है। जिससे पत्तियों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया रूक जाती है और पत्तियाँ सूख कर गिर जाती हैं।

## प्रबंधन

- कीट से ग्रसित पत्तियों को इकट्ठा नष्ट कर देना चाहिये।
- बागों में पीले चेपदार ट्रैप्स (20 ट्रेप/है.) की दर से लगाना चाहिए जिससे वयस्क कीट आकर्षित होकर चिपककर मर जाये।
- अधिक प्रकोप होने पर डायमेथोएट (0.06%) का छिड़काव करें।

## थ्रिप्स

सेलेनोथ्रिप्स रूब्रोसिक्टस और रिपिफोरोथ्रिप्स क्रूयेन्टेटस नामक थ्रिप्स अमरूद को प्रभावित करती हैं। इनका प्रकोप नर्सरी में अधिक होता है। इसके निम्फ पत्तियों की निचली सतह का रस चूसते हैं। निम्फ पीले रंग के तथा इनके उदर के सिरे पर एक चौड़ी पट्टी पायी जाती है। वयस्क में गहरे भूरे, लम्बे और गहरे भूरे आरीनूमा पंख होते हैं। इसका प्रकोप जाड़ों में फल बैठने से पकने तक होता है। अधिक प्रकोप होने पर फलों की गुणवत्ता एवं उत्पादकता प्रभावित होती हैं।

## प्रबंधन

- पीले चेपदार ट्रैपस या पीले पानी का ट्रैप रखने से इस कीट का आंकलन और नियंत्रण किया जा सकता है।
- अधिक प्रकोप होने पर थायमेथाक्जाम (0.2 ग्रा./ली.) का छिड़काव करें।

# अमरूद में लगने वाले रोगों का समेकित प्रबंधन

ए. के. मिश्र[1]

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अमरूद बहुतायत में पाया जाने वाला माइरेटेसी कुल का एक फल है। अमरूद को अमेरिका के उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र से लाया गया था किन्तु यह फल इतनी अच्छी तरह से हमारे देश में लग गया कि अब यह फल भारतीय मूल का ही प्रतीत होता है। इसे गरीबों का सेब भी कहा जाता है। पोषण और व्यावसायिक दोनों ही दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण फल है। अन्य फलों की तुलना में यह अधिक उत्पादक, सहनशील, विभिन्न जलवायु के लिए अनुकूल, विटामिन 'सी' तथा अन्य पोषक तत्वों से परिपूर्ण होता है। अत्युत्तम गुणवत्ता वाले अमरूद के फल भारत में पश्चिमी हिस्से से पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार तक फैले गंगा के कछार तक उत्पादित किये जाते हैं। इसकी बागवानी अधिक तापमान, गर्म हवा, वर्षा, लवणीय या कमजोर मृदा, कम जल या जल भराव की दशा से अधिक प्रभावित नहीं होती है। किन्तु अधिक फसल की प्राप्ति के लिए समुचित संसाधनों का सही तरीके से उपयोग करना आवश्यक होता है।

अमरूद बागवानी भारत के अधिकांश राज्यों में की जाती है। बिहार, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, गुजरात एवं आँध्र प्रदेश अमरूद के प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। उत्तर प्रदेश अमरूद उत्पादन की दृष्टि से अग्रणी राज्य रहा है जिसने 'अमरूद उत्पादक क्षेत्र' घोषित करने का सूत्रपात भी किया है। उत्तर प्रदेश राज्य सरकार ने कौशाम्बी जनपद के मुरतगंज तथा चायल क्षेत्र को 'अमरूद उत्पादन क्षेत्र' घोषित किया।

भारत में अमरूद की प्रमुख किस्में इलाहाबाद सफेदा और सरदार (एल-49) हैं। हाल ही में केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ द्वारा गुलाबी गूदे वाली किस्म 'ललित' का चयन किया जिसके प्रसंस्करण की अपार संभावनाएँ हैं। साथ ही संस्थान से चयनित किस्म श्वेता गुणवत्तायुक्त किस्म है।

विभिन्न राज्यों में प्रमुख अमरूद उत्पादन क्षेत्र निम्न प्रकार हैं।

- आँध्र प्रदेश (पूर्व गोदावरी, पश्चिम गोदावरी, गुन्टूर, कृष्णा, अनन्तपुर, मेढ़क, खम्मम)
- बिहार (भागलपुर, मुज्जफरपुर)
- गुजरात (भावनगर, अहमदाबाद)
- कर्नाटक (बैंगलोर, कोलार, शिमोगा, धारवाड़)
- मध्यप्रदेश (रायपुर, दुर्ग, जबलपुर)
- महाराष्ट्र (सतारा, बीड, पुणे, अहमदनगर, औरंगाबाद, अमरावती)
- उड़ीसा (कटक, भुवनेश्वर)

[1]परियोजना समन्वयक (उपोष्ण फल)

- राजस्थान (उदयपुर, अजमेर, चितौड़गढ़, सवाईमाधोपुर, कोटा, बूंदी, जयपुर, झालवाड़, खेतड़ी, बांसवाड़ा)
- तमिलनाडु (मदुरई, डिनाडीगुल, सेलम)
- उत्तर प्रदेश (इलाहाबाद, फरुक्खाबाद, कानपुर, उन्नाव, अलीगढ़, बदायूँ, वाराणसी, फतेहपुर, लखनऊ, फैजाबाद)

## समेकित रोग प्रबंधन

विभिन्न रोगजनक विशेषकर अनेक कवक अमरूद की फसल एवं फल को प्रभावित करते हैं। कवक के अलावा जीवाणु, शैवाल, विकार और पोषक तत्वों की कमियाँ भी रोगकारक होते हैं। लगभग 177 रोगजनक अमरूद के पेड़ के विभिन्न भाग पर पाये गये हैं जिनमें 167 कवक, 3 जीवाणु, 3 शैवाल, 3 सूत्रकृमि और 1 अधिपादप हैं। इनमें से लगभग 91 रोगजनक फलों पर, 42 पत्तियों पर, 18 टहनियों पर, 18 जड़ों में और 17 फलों की सतह पर पाये गये हैं। ये सभी अनेक बीमारियाँ, जैसे तुड़ाई से पहले एवं बाद में फलों का विगलन (सूखी सड़न, भीगी सड़न, मृदु विगलन, खट्टी सड़न, एन्थ्रेकनोज, भूरी सड़न, धब्बे, गोल सड़न, गुलाबी सड़न, मोमी फल सड़न आदि), कैंकर, उकठा, उल्टा सूखा रोग, पत्तियों का गिरना, डाल सूखना, पत्तियों के धब्बे, पत्तियों की अंगमारी, लाल किट्ट, काली फफूँदी, रस्ट फफूँदी, नई पौध की सड़न/विगलन आदि रोग पैदा करते हैं। उकठा अमरुद में होने वाला सर्वाधिक खतरनाक रोग है जिससे भारी हानि होती है।

पोषण की कमी के कारण कुछ रोग जैसे जस्ता, मैग्नीशियम तथा अन्य पोषक तत्व की कमी तथा कुछ विकार जैसे कड़ी सड़न तथा आन्तरिक सड़न भी अमरूद में बताये गये हैं। अतः, ऐसे तो अमरूद एक सहनशील फसल है किन्तु यह उकठा, फल सड़न आदि अनेक महत्वपूर्ण रोगों से प्रभावित होता है।

## उकठा

भारत में उकठा, अमरूद में लगने वाला एक महत्वपूर्ण रोग है तथा इसके कारण अमरूद के उत्पादन को भारी हानि होती है। चूँकि यह रोग भूमि द्वारा उत्पन्न होता है अतः इसके नियंत्रण के उपाय सीमित रह जाते हैं।

भारत में सर्वप्रथम 1935 में इसे इलाहाबाद के बबक्रपुर क्षेत्र से बताया गया तथा तदनुपरान्त उत्तर प्रदेश के अनेक अन्य स्थानों के अलावा पश्चिमी बंगाल में यह रोग देखा गया। वर्तमान में हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, दिल्ली, बिहार, आँध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश आदि क्षेत्रों में भी यह रोग पाया गया है।

अमेरिका (लोरिडा), ताइवान, क्यूबा, दक्षिणी अफ्रीका, पाकिस्तान और ब्राजील जैसे देशों में भी यह रोग पाया जाता है।

## रोग के लक्षण

रोग का पहला लक्षण ऊपर की टहनियों की पत्तियों पर पीला पड़ना एवं उनके किनारों का थोड़ा मुड़ना होता है। इसमें पत्तियाँ मुरझाने लगती हैं और रंग पीला-लाल सा हो जाता है। बाद में रोग के

बढ़ने पर पत्तियाँ गिर जाती हैं। कुछ टहनियाँ पर्णविहीन हो जाती हैं और उनमें नई पत्तियाँ एवं फूल नहीं निकलते हैं तथा अन्त में वे सूख जाती हैं। रोगग्रसित टहनियों पर फलों का आकार छोटा रह जाता है तथा फल काले एवं पत्थर जैसे हो जाते हैं। अन्त में सम्पूर्ण पौधा पत्तीरहित एवं मृत हो जाता है (चित्र-1)। पतली जड़ों को देखने पर कालापन दिखता है जो छाल हटाने पर और अधिक स्पष्ट दिखायी देता है। जड़ में सड़न दिखायी पड़ती है तथा छाल आसानी से हट जाती है। तने तथा जड़ के कारटिकल भाग में हल्का भूरापन आ जाता है तथा उत्तक नष्ट हो जाती हैं। हल्का भूरापन संवाहनियों के उत्तक में भी दिखायी देता है। रोगजनक छोटे पेड़ों को भी प्रभावित करता है परन्तु अधिक क्षति पुराने पेड़ों को होती है। मुख्यतः दो प्रकार के लक्षणों की पहचान की गयी है - स्लो विल्ट (धीमा उकठा) और क्विक विल्ट (शीघ्र उकठा)।

चित्र : 1 उकठा रोग से प्रभावित अमरूद के पेड़

## रोग कारक

रोगजनक जैसे-*यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम फा. स्पे. साइडी, यूजेरियम सोलेनाई, माइक्रोफोमिना फेसियोलाई, राइजोक्टोनिया बटाटिकोला, सिफेलोस्पोरियम स्पीसीज और ग्लायोक्लैडियम रोजियम* रोग पैदा करते हैं।

## रोग प्रबंधन

रोग के प्रबंधन के लिए निम्नलिखित उपायों को अपनाना चाहिये।

- अमरूद के बाग को साफ-सुथरा रख कर रोग को कम किया जा सकता है। रोगग्रसित पौधों को उखाड़ कर जला देना चाहिये। ऐसे पौधों के चारों तरफ नाली बना देनी चाहिये जिससे जमीन द्वारा रोग, रोगग्रसित पौधों से स्वस्थ पौधों में नहीं फैले।
- नये पौधों को लगाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उसकी जड़ें क्षतिग्रस्त न हों। समय पर सही मात्रा में खाद एवं जल का प्रबंधन करने और खर-पतवार का नियंत्रण करके पेड़ों को स्वस्थ रखने से पेड़ में रोग नहीं लगता है। पौधों को प्रतिरोपित करने से 2 हफ्ते पहले गड्ढों में फार्मलीन डाल कर 3 दिनों के लिए ढक कर उपचारित करना चाहिए।
- यह भी देखा गया है कि जब हरी खाद और कार्बनिक स्रोतों का प्रयोग करते हैं तो पौधों में बीमारी कम लगती है।
- कार्बनिक खाद जैसे तेलयुक्त खल्ली और चूने का प्रयोग रोग को नियंत्रित करता है।
- नाइट्रोजन और जिंक का सही अनुपात में प्रयोग कर रोग के फैलाव को नियंत्रित किया जा सकता है।

- रोग रोधक प्रकंद (रूट स्टॉक) इस रोग को नियंत्रित करने का एक वैकल्पिक तरीका हो सकता है। सीडियम मोले x सीडियम ग्वाजावा के संकर को रोग से मुक्त पाया गया है तथा इसे प्रकंद (रूट स्टॉक) की तरह प्रयोग किया जा सकता है।
- प्रयोगशाला में पाया गया है कि विभिन्न फफूँदनाशक भी रोग को नियंत्रित करते हैं परन्तु इनका प्रभाव खेत में समाप्त होते ही रोगजनक दुबारा सक्रिय और अधिक आक्रमणशील हो जाते हैं।
- जैविक नियंत्रण, प्रभावी अन्तः फसलें और भूमि का शोधन जैसे नियंत्रण के उपायों को पर्यावरण हित में माना गया है।
- एस्परजिलस नाइजर स्ट्रेन ए एन 17 द्वारा जैविक निंयत्रण काफी प्रभावी पाया गया है। एस्परजिलस नाइजर को गोबर की खाद में विकसित कर 5 कि.ग्रा. खाद प्रति पेड़ की दर से नए पौधों को लगाते समय डालना चाहिए। पुराने पेड़ों के लिए यह खाद 10 कि.ग्रा. प्रति पेड़, प्रति वर्ष के दर से डालना चाहिये।

## एन्थ्रकनोज (*लीओस्पोरियम साइडी/ग्लोमेरेला साइडी, कोलेटोट्राइकम साइडी*)

उत्तर प्रदेश, पंजाब, कर्नाटक में यह रोग एक प्रमुख समस्या है। इस रोग के द्वारा अमरूद में उल्टा सूखा, टहनी का ऊपर से मुरझाना, और फलों के धब्बे जैसे लक्षण देखे जाते हैं। उल्टा सूखा रोग अवस्था, फफूँद ग्लीओस्पोरियम साइडी द्वारा उत्पन्न होती है जिसके परिणामस्वरूप पेड़ मर जाते हैं।

## रोग के लक्षण

### उल्टा सूखा रोग अवस्था

इसमें पेड़, ऊपर से नीचे की ओर सूखता जाता है। नई शाखाओं, नई पत्तियों और छोटे फलों पर, जब वे कोमल होते हैं, यह रोग जल्दी पनपता है। टहनियों के ऊपरी सिरे का हरा रंग गहरे भूरे रंग में बदल जाता है और बाद में काला पड़ कर यह ऊतकक्षय क्षेत्र नीचे की ओर फैलते हुए उल्टा सूखा रोग (डाई बैक) उत्पन्न करता है। यह फफूँद संक्रमित टहनियों से विकसित होकर पर्णवृन्त और नई पत्तियों पर फैलती है, परिणामस्वरूप पत्तियाँ झुलस जाती हैं तथा टहनियाँ पत्ती रहित होकर सूख जाती हैं। मौसम में आर्द्रता बढ़ने पर बीजाणु पात्र (एसर्वुलस) काले बिन्दु के रूप में पूरी टहनी के संक्रमित भाग पर दिखाई पड़ते हैं। अगस्त से सितम्बर माह के दौरान यह बीमारी महामारी का रूप ले लेती है।

### फल और पत्तियों का संक्रमण

फल और पत्तियों का संक्रमण आम तौर पर बरसात के महीने में देखा जाता है। पहले कच्चे फलों पर सुई की नोंक के बराबर धब्बे दिखाई पड़ते हैं, जो धीरे-धीरे बढ़ जाते हैं। ये धब्बे गहरे भूरे रंग के, धंसे हुए, गोलाकार होते हैं और इन धब्बों के बीच में छोटी, काली पीठिकाएं बनती हैं जिनमें आर्द्रता बढ़ने पर अधिक मात्रा में बीजाणु बनते हैं। ऐसे छोटे धब्बे आपस में मिल कर बड़े धब्बे बनाते हैं। फलों का संक्रमित भाग कार्कनुमा कड़ा हो जाता है, और संक्रमण बढ़ने पर इनमें दरारें पड़ जाती हैं। संक्रमित पके फलों में ऊत्तक का मृदुकरण होता है

और धब्बे बढ़ कर 10-20 मि.मी. के हो जाते (चित्र - 2) हैं। परिपक्व (तैयार) फलों पर संक्रमण बहुत तेजी से फैलता है, जबकि छोटे फल संक्रमित नहीं होते हैं।

चित्र : 2 अमरूद के पके फल पर एन्थ्रेकनोज का प्रभाव

अविकसित कलिका और फूल पर संक्रमण फैलने से ये झड़ जाते हैं। पत्तियों पर इसका लक्षण सिरे और किनारों पर ऊत्तकक्षय के रूप में देखा गया है। ये धब्बे आमतौर पर सलेटी रंग के होते हैं और इनमें एसर्वुलस बनते हैं।

## रोग प्रबंधन

बोर्डो मिश्रण (3:3:50) या कॉपर आक्सीक्लोराइड (0.3%) का सात दिनों के अन्तराल पर छिड़काव लाभकारी है। डाइफोलेटान (0.3%) या डाइथेन जेड-78 (0.2%) का मासिक छिड़काव भी रोग नियंत्रण में उपयोगी पाया गया है। तुड़ाई उपरान्त फलों को 20 मिनट के लिए 500 पी पी एम (500 मि.ग्रा./ली.) टेट्रासाइक्लीन से उपचारित करना प्रभावी पाया गया है।

## कैंकर (*पेस्टालोशिया साइडी*)

पेस्टालोशिया साइडी नामक फफूँद द्वारा फलों पर लगने वाला यह रोग मुम्बई, मैसूर, थाने, धारवाड़, पूना, पोन्टा वैली (हिमाचल प्रदेश) तथा लखनऊ में पाया गया है।

## रोग के लक्षण

यह रोग विशेषतः हरे फलों पर, तथा कभी-कभी पत्तियों पर देखा जाता है। शुरूआती लक्षण फलों पर बहुत छोटे भूरे या जंग जैसे रंग के गोलाकार बिना फटे मृत धब्बे के रूप में दिखायी पड़ते हैं जो बाद में संक्रमण बढ़ने पर बढ़ते हैं तथा वाह्य त्वचा कुंडलाकार रूप से फटी हुई सी दिखाई देती है। इन कैंकरस धब्बों का किनारा उठा हुआ तथा भीतरी हिस्सा धँसा हुआ होता है। कैंकर के लक्षण पत्तियों की अपेक्षा फलों पर अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। कैंकर फलों के ऊपरी सतह पर ही सीमित रहता है तथा गूदे में अधिक नीचे तक नहीं फैलता है। रोग पुराना होने पर सफेद कवक तन्तु बनते हैं जिसमें अधिक मात्रा में बीजाणु दिखते हैं। संक्रमण बढ़ने पर यह धब्बे उभरे हुए तथा अधिक संख्या में दिखाई देते हैं, परिणामस्वरूप फल फट जाते हैं और बीज दिखाई पड़ने लगते हैं। संक्रमित फल अविकसित, कड़े, काले होते हैं तथा बाद में सूख कर गिर जाते हैं। कभी-कभी पत्तियों पर गेरुए भूरे रंग के कोणीय धब्बे दिखते हैं। आमतौर पर सर्दियों में ये धब्बे देखे जाते हैं, जबकि बरसात के मौसम में लाल चित्ती बनती है। सरदार प्रजाति (लखनऊ-49) में फलनकाय बड़े, उभरे और अधिक संख्या में होते हैं। इलाहाबाद सफेदा और ऐप्पल कलर किस्म रोग प्रतिरोधी हैं।

## रोग प्रबंधन

रोग आरम्भ होने पर 1 प्रतिशत बोर्डो मिश्रण या चूना युक्त सल्फर का 15 दिनों के अन्तराल पर 3-4 छिड़काव करने से रोग नियंत्रित किया जा सकता है।

## रेड रस्ट (लाल रतुआ) *(सिफैल्यूरस वाइरेसेंस, सिफैल्यूरस पैरासाइटिकस)*

यह शैवाल अमरूद की पत्तियों और फलों पर धब्बे बनाता है जिससे प्रकाश-संश्लेषण की प्रक्रिया घट जाती है। इस रोग से गंभीर आर्थिक क्षति नहीं पहुँचती। यह रोग मैसूर, पटना, लखनऊ तथा सीतापुर में पाया गया है।

## रोग के लक्षण

यह रोग अमरूद की नई पत्तियों पर बरसात के मौसम में देखा जा सकता है। इसमें पत्तियों की सतह पर मखमली, गोल, लाल-हरे रंग के 2-3 मि. मी. के धब्बे बनते हैं। थोड़े ही दिनों में ये धब्बे थोड़े बड़े हो जाते हैं और आपस में मिल कर बड़ा धब्बा बनाते हैं। ये धब्बे समूह में या फिर पूरी सतह पर बिखरे हुए होते हैं। पत्तियों पर संक्रमण ज़्यादातर ऊपरी सिरे, किनारे या मध्य शिरा के पास होता है। कच्चे फलों पर ये धब्बे करीब काले रंग के होते हैं। जैसे-जैसे फलों का आकार बढ़ता है, धब्बे धंसे हुए प्रतीत होते हैं। पुराने धब्बों के मध्य में फटाव दिखाई पड़ता है। फलों की बाह्य त्वचा को बेध कर यह शैवाल कुछ परतों के अन्दर की कोशिकाओं तक ही पहुँच पाता है। फलों पर लगने वाले धब्बों का आकार पत्ती के धब्बों से छोटा होता है और रंग गहरा हरा, भूरा या काला होता है। रोग अप्रैल के महीने से शुरू होकर मई-अगस्त तक गंभीर रूप ले लेता है। अधिक बरसात के महीनों (जुलाई-सितम्बर) में बीजाणुजनन आसानी से होता है। सितम्बर में रोग का प्रभाव सबसे अधिक पाया गया है, जबकि सर्दी में यह लक्षण दिखाई नहीं पड़ते।

## रोग प्रबंधन

रेड रस्ट के प्रबंधन के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत का 3-4 छिड़काव 15 दिनों के अन्तराल पर रोग को नियंत्रित करता है।

## पौध जड़ विगलन रोग(*राईजोक्टोनिया सोलेनाई*

जड़ विगलन एक गंभीर रोग समस्या है तथा नर्सरी/पौधशाला में यह रोग काफी हानिकारक साबित होता है।

## रोग के लक्षण

पौधे के अंकुरण से पहले और बाद में यह रोग देखा गया है। पौधे के अंकुरण से पहले की स्थिति में संक्रमित बीज और पौधे पर जलसिक्त धब्बे पड़ जाते हैं तथा बीज मृदु हो कर सड़ जाते हैं। ऐसे संक्रमित छोटे पौधे मिट्टी की ऊपरी सतह तक पहुँचने से पहले ही मर जाते हैं। पौधे के अंकुरण के बाद की अवस्था में अधोबीजपत्राक्ष (हाइपोकोटाइल) का रंग मलिन पड़ कर पीले से भूरा हो जाता है और नीचे की तरफ फैलता है जिससे ऊत्तक पहले मृदु, फिर सड़ कर सिकुड़ जाते हैं। अंत में पौधे गिर कर मर जाते हैं। मौसम में आर्द्रता बढ़ने पर ऐसे पौधों की सतह पर कवक जाल देखा जा सकता है।

## रोग प्रबंधन

रोग का प्रबंधन निम्नलिखित उपायों से किया जा सकता है।

- संक्रमित पौध या खर-पतवार को निकाल कर जला देना चाहिए।
- पौधों में अधिक सिंचाई नहीं देनी चाहिये और पौधे अधिक घने नहीं होने चाहिए, क्योंकि यह रोगजनक ज़्यादा नमी में पनपता है। पौधशाला में जल के उचित निकास का प्रबन्ध होना चाहिए।
- चूँकि यह रोग जनक अनेकों जातियों के पौधो पर लम्बे समय तक जीवित रहता है, अतः संवेदनशील जातियों के पौधों को नहीं लगाना चाहिए।
- अमरूद के बीज की बुआई से पहले इन्हें 0.2 प्रतिशत कैप्टान/थिरम से उपचारित करना चाहिए।
- पौधशाला में रोग की तीव्रता को कम करने के लिए मिट्टी को कॉपर ऑक्सीक्लोराइड से उपचारित करना चाहिए।

## फाइटोथोरा फल विगलन रोग *(फाइटोथोरा पैरासाइटिका, फाइटोथोरा निकोसियाना* किस्म *पैरासाइटिका)*

*फाइटोथोरा पैरासाइटिका* द्वारा होने वाला यह रोग पहली बार 1929 में पूसा, बिहार में पाया गया। यह रोग बरसात में जुलाई-सितम्बर माह में दिखाई देता है। मैसूर, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान और महाराष्ट्र में यह रोग काफी हानिकारक पाया गया है। कुछ किस्में, जैसे इलाहाबाद सफेदा, बनारस, बंगलौर लोकल, रेड लेश्ड और सीडलेस, रोग के प्रति संवेदनशील हैं। जुलाई 1975 में पंजाब के लुधियाना शहर में यह रोग इलाहाबाद सफेदा, एप्पल ग्वावा, रेड लेश्ड और पिंक लेश्ड किस्मों पर देखा गया।

## रोग के लक्षण

ऐसे फल जो भूमि पर गिरे होते हैं या भूमि के पास लटके होते हैं या फिर भण्डारण के लिए रखे जाते हैं, रोग से सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। इस रोग की शुरुआत डंठल के विपरीत सिरे से होती है। फल जैसे बढ़ता है, सफेद कवक जाल उसकी सतह पर बढ़ता है और आर्द्रता बढ़ने पर 3-4 दिनों में पूरी सतह पर फैल जाता है। भूमि की सतह के पास जो फल होते हैं और घनी पत्तियों से ढ़के होते हैं, नमी बढ़ने पर अधिक प्रभावित होते हैं। सफेद कवक जाल जहाँ फल की सतह पर बढ़वार करता है वहाँ खाल मृदु पड़ कर हल्की भूरी से गहरी भूरी हो जाती है और विशेष प्रकार की दुर्गन्ध छोड़ती है। फलों का स्वाभाविक आकार तब तक बना रहता है जब तक मृतजीवी फलों में घुस कर उसको सड़ा नहीं देती। ऐसे फल या तो पेड़ पर लटके रहते हैं या फिर गिर जाते हैं। जब रोग का प्रभाव छोटे या कच्चे फलों पर होता है तो वे सिकुड़ कर गन्दे भूरे से गहरे भूरे, कड़े और कुरूप हो कर सूख कर गिर जाते हैं।

## रोग प्रबंधन

रोग की रोकथाम के लिए डाईथेन जेड-78 (0.2%) और ऑरियोफन्जिन 10 पी पी एम

(10 मि.ग्रा./ली.) का छिड़काव भी प्रभावी पाया गया है, जबकि कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को फलों के लिए हानिकारक बताया गया है।

## शुष्क सड़न रोग (*डिप्लोडिया नेटालेन्सिस*)

यह रोग सर्वप्रथम 1969 में वैलयानी में देखा गया। कुछ संक्रमित पेड़ों के 40 प्रतिशत से अधिक फलों पर इसका प्रकोप पाया गया।

## रोग के लक्षण

आरम्भ में इसमें हल्के भूरे रंग के धब्बे फलों के डंठल वाले छोर या डंठल के विपरीत छोर पर देखे जा सकते हैं। कभी-कभी यह संक्रमण बड़ी तेजी से फल पर फैलता है और 3-4 दिनों में पूरा फल प्रभावित हो जाता है। कभी-कभी फलों के अन्य हिस्सों पर डंठल के दूसरे छोर पर भी लक्षण प्रकट होते हैं। पूरी तरह संक्रमित नए तथा परिपक्व फल गहरे भूरे रंग से काले होकर अन्ततः सूख जाते हैं। ऐसे कई सूखे फल पेड़ों पर देखे जा सकते हैं। सूखे फल की सतह पर काफी मात्रा में सूई की नोक के बराबर पिक्नीडिया बनते हैं।

## रोग प्रबंधन

15 दिनों के अन्तराल पर जाइराईड 3 ग्रा./ली. का छिड़काव रोग की रोकथाम करता है और यह किसी भी प्रकार से फूल तथा फल पर हानिकारक नहीं है।

## स्टाइलर एंड राट (*फोमोप्सिस साइडी*)

यह रोग लखनऊ और बैंगलौर के आस-पास के क्षेत्रों में देखा गया है। फलों पर किसी प्रकार की चोट से रोग तेजी से फैलता है।

## रोग के लक्षण

इस रोग में डंठल के विपरीत सिरे (स्टाइलर एन्ड) पर रंग में परिवर्तन होता है और फल बढ़ कर भूरे से गाढ़े भूरे रंग के हो जाते हैं तथा संक्रमित भाग नरम हो जाता है। ऊपर की सतह के अलावा फल के अन्दर का गूदा भी प्रभावित होता है, रंग सफेद की बजाए भूरा पड़ जाता है तथा गूदा मुलायम हो जाता है। संक्रमण बढ़ने पर भीतरी ऊत्तक के अव्यवस्थित होने से फल सिकुड़ जाते हैं और इन फलों की वाह्य त्वचा की सिकुड़न गोलाकार धारियों के रूप में दिखाई पड़ती है। बाद में पूरा फल प्रभावित हो जाता है और सतह पर पिक्नीडिया विकसित होते हैं। रोग की सभी अवस्थाओं में प्रभावित फलों पर अन्तर-कोशिकीय कवक जाल फैल जाता है।

## रोग प्रबंधन

फल के परिपक्व होने की अवस्था में बाविस्टिन या टॉपसिन (0.1%) का 15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव कर रोग को नियंत्रित किया जा सकता है, परन्तु यह ध्यान रखना आवश्यक है कि तुड़ाई से 15 दिनों पहले तक की अवधि के बीच कोई भी छिड़काव नहीं किया जाना चाहिए।

# अमरूद का तुड़ाई उपरांत प्रबंधन

भारती किल्लाड़ी[1] एवं रेखा चौरसिया[2]
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अमरूद भारतीय उपमहाद्वीप के प्रचलित फलों में से एक फल है। इसमें भीनी सुगंध तथा स्वाद के अतिरिक्त पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। अमरूद अपनी उच्च कोटि की पेक्टिन के लिए जाना जाता है जो 0.5-2.8 प्रतिशत की मात्रा में मौजूद होती है। यह विटामिन-सी का भी एक उत्तम स्रोत है। अमरूद में 500 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम गूदा तक विटामिन-सी पाया जाता है। उच्च मात्रा में विटामिन-सी उपलब्ध होने के कारण अमरूद का प्रति ऑक्सीकारक मूल्य अच्छा है। इसमें शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने की प्रबल शक्ति है। अमरूद अपनी सर्व उपलब्धता, स्वाद, सुवास तथा उत्तम पोषक गुणों के कारण 'आम आदमी का सेब' भी कहलाता है। पिछले कुछ वर्षों में भारत में फलों के उत्पादन में अत्याधिक वृद्धि हुई है लेकिन तुड़ाई उपरांत प्रबंधन नहीं होने के कारण उत्पादित फलों का लगभग 25-30 प्रतिशत भाग नष्ट हो जाता है। अतः उचित तुड़ाई कर तथा तुड़ाई उपरांत प्रबंधन में सुधार कर उत्पादन का एक बड़ा भाग नष्ट होने से बचाया जा सकता है।

## तुड़ाई उपरांत प्रबंधन

अमरूद शीघ्र खराब होने वाला एक फल है, जिसका सामान्य ताप पर भंडारण एक सीमित समय तक ही किया जा सकता है। अतः चोट, रोग आदि द्वारा होने वाली तुड़ाई उपरांत हानियों से बचने के लिए तुड़ाई पूर्व एवं उपरांत उचित उपायों की नितांत आवश्यकता है। इन उपायों द्वारा फलों की भण्डारण क्षमता भी बढ़ायी जा सकती है। अमरूद के उत्पादन 24.62 लाख मीट्रिक टन को देखते हुए इसका निर्यात लगभग 289.3 मिट्रिक टन काफी कम है। यमन, अरब रिपब्लिक, कुवैत, संयुक्त राष्ट्र, अमेरिका, ब्रिटेन आदि अन्य देश भारत से अमरूद का आयात करते हैं।

## परिपक्वता

फलों की तुड़ाई उपरांत गुणवत्ता निधारण में परिपक्वता की एक अहम भूमिका होती है। अमरूद में परिपक्वता पुष्पीकरण के लगभग 90-150 दिन पश्चात आती है जब फल हल्के हरे-पीले रंग के हो जाते हैं। इस प्रकार से रंग विकास द्वारा परिपक्वता का मापन अमरूद में सबसे प्रचलित पद्धति है। हालाँकि कुल घुलनशील ठोस, अम्लता तथा आपेक्षिक घनत्व के मापन द्वारा भी परिपक्वता का निर्धारण किया जा सकता है। परिपक्व अमरूद का फल, आपेक्षिक घनत्व 1.0 से कम होने के कारण पानी पर तैरता है। शोध में यह पाया गया है कि 1.00 से 1.02 आपेक्षिक घनत्व वाले अमरूद के फलों की भंडारण क्षमता बेहतर होती है तथा वे सुदूर परिवहन के लिए काफी उपयुक्त होते हैं।

[1]वैज्ञानिक एवं [2]तकनीकी अधिकारी

## फलों की थैलाबंदी

उच्च गुणवत्तायुक्त फल प्राप्त करने के लिए फलों की थैलाबंदी भी की जा सकती है जिसमें फलों को भूरे कागज के लिफाफे में तने के साथ धागे द्वारा फल बैठन के लगभग डेढ़ से दो माह पश्चात बाँध दिया जाता है। इस प्रकार फलों का घर्षण तथा मक्खियों एवं भेदक कीड़ों से बचाव हो जाता है। साथ ही उनमें अच्छी तरह से रंग का विकास भी होता है।

## फलों की तुड़ाई

सख्त, परिपक्व तथा पीले-हरे अथवा अर्द्ध पीले फलों की तुड़ाई की जाती है। परंपरागत रूप में अमरूद को हाथ से अथवा विशेष प्रकार के डंडों से तोड़ा जाता है। हालाँकि इस प्रकार की तुड़ाई के दौरान फलों के गिरकर क्षतिग्रस्त हो जाने की काफी संभावनाएं रहती हैं जिससे उनकी गुणवत्ता तथा मूल्य प्रभावित होता है। वर्षा ऋतु वाले अमरूद को 2-3 दिन के अंतराल पर तथा जाड़ों में फलों को 4-5 दिन के अंतराल पर तोड़ना चाहिये। फलों की तुड़ाई उनके गंतव्य स्थान को ध्यान में रखकर करना चाहिये। साधारणतया स्थानीय बाजार में विक्रय हेतु अमरूद को पूर्ण परिपक्व अवस्था में तोड़ा जाता है जबकि दूरस्थ बाजार हेतु उन्हें रंग परिवर्तन की अवस्था में तोड़ा जाता है। फलों को डंठल तथा एक-दो पत्तियों के साथ तोड़ना वाँछनीय है क्योंकि इससे फलों में लम्बी अवधि तक ताजगी बनी रहती है। फलों को टोकरी में तोड़कर छाँव में रखना चाहिये, जिससे कि धूप की गर्मी द्वारा उनकी भंडारण क्षमता कम नहीं होने पाये। अमरूद का छिलका मुलायम होने के कारण उसमें चोट-खरोंच की काफी संभावनायें रहती हैं। अतः फलों को सावधानी पूर्वक तोड़ना चाहिये।

## फलों की छँटाई एवं श्रेणीकरण

संक्रमित, रोगग्रस्त तथा चोटयुक्त फलों को छाँटकर अलग कर देना चाहिए। आमतौर पर फलों को बिना कोई उपचार दिए पैक कर दिया जाता है जिसकी वजह से भंडारण एवं परिवहन के दौरान उनके संक्रमित होने की संभावना बढ़ जाती है। इसके विपरीत पैक हाउस में फलों को पहले अच्छी तरह धोया जाता है। तत्पश्चात उन्हें गर्म पानी (48 से.ग्रे.) में 5 मिनट तक डुबोकर उपचारित किया जाता है जिससे एन्थ्रोक्नोज रोग से बचाव हो सके। अमरूद के फलों का किसी फफूँदीनाशक घोल द्वारा उपचार अवांछनीय है क्योंकि इन फलों का उपभोग वगैर छिलका उतारे ही किया जाता है। फलों का श्रेणीकरण उनके आकार, आकृति अथवा भार के आधार पर किया जाता है। सरदार, ललित, अर्का मृदुला, अर्का अमूल्या तथा धारवार के फल, इलाहाबाद सफेदा, पंत प्रभात तथा चित्तीदार किस्म के फलों की अपेक्षा बड़े आकार के होते हैं। रुप-रंग के आधार पर भी फलों का श्रेणीकरण किया जाता है। इस प्रकार 5 प्रतिशत से कम दाग धब्बे युक्त 'ए' श्रेणी तथा 5 प्रतिशत से अधिक दाग धब्बेयुक्त फल 'बी' श्रेणी में रखे जाते हैं। कोडेक्स तथा यूरेपगैप मानक भी निर्यात हेतु फल की किस्म, आकार, आकृति, रुप-रंग तथा गुणवत्ता में एकरूपता की आवश्यकता पर विशेष बल देते हैं।

## पेटीबंदी एवं भंडारण

अमरूद को स्थानीय बाजार में विक्रय हेतु बांस की टोकरी, लकड़ी के बक्से अथवा बोरों में पैक किया जाता है। अस्तर के रूप में सूखी घास, धान का पुआल तथा सूखी पत्तियों का प्रयोग किया जाता है जो अखबारी कागज तथा कागज की कतरनों की अपेक्षा उपयोगी नहीं पाये गये हैं। इस प्रकार की पेटीबंदी, विशेष रूप से लम्बी दूरी के परिवहन हेतु उपयोगी नहीं पायी गयी है क्योंकि इनसे फलों में खरोंच तथा अन्य प्रकार की चोट आ जाती है। इस संदर्भ में छिछले लकड़ी के बक्से अथवा गत्ते (सी.एफ.बी.) के बक्से ज्यादा उपयोगी साबित हुए हैं। गत्ते के बक्सों की मजबूती तथा लचीलेपन के कारण उनमें फलों का परिवहन ज्यादा सुविधाजनक रहता है। इनका चट्टा लगाना (एक के ऊपर एक रखना) भी आसान है। केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ ने 2 कि.ग्रा. अमरूद की पेटीबंदी हेतु गत्ते के बक्सों को विकासित किया है। 0.5 प्रतिशत छिद्रयुक्त गत्ते के बक्सों में अमरूद को साधारण तापमान पर 9 दिनों तक सुरक्षित भंडारित किया जा सकता है। निर्यात हेतु प्रत्येक फल को पॉलीस्टीरीन की जाली में लपेटकर गत्ते के डिब्बे में पैक किया जा सकता है। यह सार-संभाल के दौरान फलों को रगड़ द्वारा क्षतिग्रस्त होने से बचाता है।

साधारण तापमान पर अमरूद की भंडारण क्षमता कुछ दिनों की ही होती है। किस्म के आधार पर जाड़ों वाले अमरूद के परिपक्व फल साधारण अवस्था (20-25 से.ग्रे.) में 8 दिन तक तथा वर्षा ऋतु वाले फल 4 दिन तक भंडारित किये जा सकते हैं। इलाहाबाद सफेदा तथा सरदार जैसी व्यावसायिक किस्में 6 दिन तक तथा ललित किस्म साधारण अवस्था में 9 दिन तक भंडारित की जा सकती है। तुड़ाई पूर्व कैल्सियम तथा फफूँदी नाशक का छिड़काव, फलों की गुणवत्ता तथा भंडारण क्षमता बढ़ाने में उपयोगी साबित हुआ है। इलाहाबाद सफेदा तथा सरदार किस्म के फलों को 0.5-2.0 प्रतिशत छिद्रयुक्त 200-600 गेज मोटी पॉलीथीन के थैलों में साधारण तापमान पर भंडारित करने पर उनकी भंडारण क्षमता क्रमशः 8 एवं 12 दिन तक बढ़ायी जा सकती है। निम्न ताप पर भंडारण द्वारा भी अमरूद की भंडारण अवधि बढ़ायी जा सकती है। पीले-हरे पके अमरूद के फलों को 8-100 से.ग्रे. तापमान तथा 85-90 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता पर 2-5 दिनों तक तथा परिपक्व हरे फलों को 2-3 हतों तक रखा जा सकता है। छिद्रयुक्त पॉलीथीन थैलों में पैक कर अमरूद को 50 से.ग्रे. तापमान पर 4 सप्ताह तक सुरक्षित भंडारित किया जा सकता है। इस तापमान से नीचे फलों को भंडारित करने पर उनमें शीत प्रकोप के लक्षण आ जाते हैं जो उनके बाजारी मूल्य को पूर्णतया प्रभावित करते हैं।

फलों को नियंत्रित वातावरण (सी.ए. भंडारण) अवस्था में रखकर लम्बे समय तक भंडारित किया जा सकता है। यह वह विधा है जिसमें फलों में श्वसन तथा ईथलीन विकास की गति को नियंत्रित कर उनका भंडारण बढ़ाया जाता है। शोध द्वारा पाया गया है कि यदि किसी कक्ष में कार्बन डाईऑक्साइड गैस का स्तर 5 प्रतिशत से अधिक बढ़ा दिया जाए तथा ऑक्सीजन का स्तर 5 प्रतिशत से कम कर दिया जाए तो अमरूद की भंडारण क्षमता एक माह तक बढ़ जाती है। निम्न तापमान

पर सी.ए. भंडारण से और अच्छे नतीजे प्राप्त होते हैं।

## परिवहन

अमरूद का परिवहन अधिकतर सड़क द्वारा गाड़ी, ट्रक, आदि के माध्यम से होता है। कभी-कभी फल खुले रूप में परिवहित किए जाते हैं जिससे उनका एक बड़ा भाग क्षतिग्रस्त हो जाता है। बोरों अथवा बांस की टोकरी में भी परिवहन के दौरान काफी हानि होती है। इस संदर्भ में गत्ते के बक्से ज्यादा उपयोगी पाये गये हैं। इनमें चोट-खरोंच की संभावना काफी कम रहती है। शीत वाहनों का उपयोग फलों की ढुलाई में काफी सार्थक सिद्ध हो सकता है क्योंकि इनमें फलों की ताजगी लम्बे समय तक बनाए रखी जा सकती है। निम्न तापमान पर भंडारित फलों के परिवहन में शीत वाहन की उपयोगिता और भी अधिक है। निर्यात के लिए फलों को गत्ते के बक्से में पैक कर निम्न तापमान पर रखकर उनकी गुणवत्ता लम्बे समय तक बनायी रखी जा सकती है।

# भारत में अमरूद का उत्पादन एवं विपणन

अजय वर्मा[1]

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अमरूद जनमानस का फल है। यह कम मूल्य पर वर्ष में लगभग सात माह तक उपभोक्ताओं को उपलब्ध रहता है। फल की उत्पादन लागत कम होने के कारण लघु एवं सीमान्त कृषक भी इसका उत्पादन सफलतापूर्वक कर सकते हैं। साथ ही कम आमदनी वाले उपभोक्ता भी इसका उपभोग कर सकते हैं। देश के उष्ण कटिबंधीय एवं उपोष्ण जलवायु में इस फल का सफल उत्पादन होता है। इसे कष्टकृष्य भूमि में भी उत्पादित किया जा सकता है। मधुर एवं तीव्र सुगन्ध के कारण इसकी ग्राह्यता बढ़ जाती है। फल में प्रचुर मात्रा में विटामिन-सी एवं पेक्टिन पायी जाती है। साथ ही फास्फोरस, कैल्सियम, लौह, नियासिन, पैन्टाथेनिक अम्ल, थायमिन एवं राइबोलेविन का महत्वपूर्ण स्रोत होने के कारण देश की पोषण समस्या के हल हेतु यह फल काफी महत्वपूर्ण है।

## भारत में अमरूद का उत्पादन

अमरूद मुख्यतः बरसात में जुलाई-अगस्त तथा शीत ऋतु में अक्टूबर से फरवरी में उपलब्ध रहता है। भारत में समस्त फलों के अन्तर्गत कुल 63.83 लाख हैक्टेयर क्षेत्रफल का 3.21 प्रतिशत अमरूद से आच्छादित है। वहीं कुल फल उत्पादन (748.78 लाख मीट्रिक टन, 2010-11) का 3.29 प्रतिशत अमरूद का उत्पादन है। वर्ष 2001-2002 में अमरूद के अन्तर्गत 15.5 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल था जो वर्ष 2010-11 में 20.5 लाख हेक्टेयर टन हो गया। अतः इस दौरान 32.3 प्रतिशत वृद्धि पायी गयी। हालाँकि वर्ष 2001-02 से 2010-11 तक अमरूद का उत्पादन 17.16 से बढ़कर 24.62 लाख मीट्रिक टन हो गया, अर्थात इस फल की उत्पादन 43.5 प्रतिशत बढ़ा है, परन्तु वर्ष 2009-10 में इस फल का उत्पादन 25.72 लाख मीट्रिक टन था जो विगत वर्षों में सर्वाधिक था। अमरूद का क्षेत्रफल एवं उत्पादन पिछले 10 सालों में बढ़ा है किन्तु इसकी गति धीमी रही है।

देश में अमरूद की उत्पादकता का अध्ययन करने से ज्ञात हुआ कि जहाँ वर्ष 2001-02 में यह 11.1 मीट्रिक टन प्रति हेक्टेयर थी वहीं 2010-11 में बढ़कर 12.0 मीट्रिक टन हो गयी है अर्थात 10 वर्षों की अवधि में उत्पादकता में मात्र 8.1 प्रतिशत की ही वृद्धि दर्ज की गयी (चित्र-1)। वास्तव में वर्ष 2003-04 में उत्पादकता में गिरावट दर्ज की गयी जो वर्ष 2006-2007 तक जारी रही। इस दौरान अमरूद की राष्ट्रीय उत्पादकता मात्र 10.4 मीट्रिक टन प्रति हेक्टेयर रह गयी। तत्पश्चात उत्पादकता में वृद्धि पायी गयी जो लगातार बढ़कर वर्तमान स्तर पर पहुँच गयी।

[1]प्रधान वैज्ञानिक

राज्यवार अमरूद के अन्तर्गत वर्ष 2010-11 में क्षेत्रफल एवं उत्पादन का विश्लेषण करने से ज्ञात हुआ कि महाराष्ट्र देश के अमरूद के कुल क्षेत्रफल का 17.58 प्रतिशत एवं कुल अमरूद उत्पादन का 12.63 प्रतिशत उत्पादन कर अग्रणी है। इसके पश्चात बिहार राज्य में अमरूद के अर्न्तगत राष्ट्रीय क्षेत्रफल का 14.36 प्रतिशत है परन्तु उत्पादन में यह राज्य चतुर्थ स्थान पर है क्योंकि देश के कुल अमरूद उत्पादन का मात्र 9.55 प्रतिशत ही यहाँ उपलब्ध है। वहीं मध्य प्रदेश मात्र देश के 4.74 प्रतिशत क्षेत्रफल से 11.40 प्रतिशत फल उत्पादन में योगदान देता है। इसी प्रकार देश में अमरूद के अर्न्तगत क्षेत्रफल का 7.13 प्रतिशत उत्तर प्रदेश में है। परन्तु देश के कुल अमरूद उत्पादन में इस राज्य का योगदान 9.80 प्रतिशत है। पश्चिम बंगाल अमरूद के उत्पादन हेतु एक अन्य महत्वपूर्ण राज्य है।

विभिन्न राज्यों में अमरूद की उत्पादकता के अध्ययन से ज्ञात हुआ कि न्यूनतम (7.2 मीट्रिक टन/हे.) उड़ीसा में उत्पादकता अधिकतम तथा 29.0 मीट्रिक टन/ हे. मध्य प्रदेश में आँकी गयी है। दूसरे स्थान पर 19.4 मीट्रिक टन प्रति हेक्टेयर के साथ कर्नाटक है। देश की सबसे महत्वपूर्ण किस्म इलाहाबाद सफेदा के उत्पादन क्षेत्र उत्तर प्रदेश में अमरूद की उत्पादकता 16.5 टन प्रति हेक्टेयर हैं। इलाहाबाद के गंगा के मैदानी क्षेत्र प्रमुख व्यावसायिक किस्में इलाहाबाद सफेदा एवं सरदार का मूल स्थान है। इसके पश्चात महाराष्ट्र एवं बिहार अमरूद के क्षेत्रफल की दृष्टि से क्रमशः प्रथम एवं द्वितीय स्थान पर हैं। यहाँ उत्पादकता क्रमशः 8.6 एवं 8.0 मीट्रिक टन प्रति हेक्टेयर है। देश में ही इतने अधिक उत्पादकता परिवर्तित से जाहिर है कि विभिन्न प्रदेशों में इसे बढाने की प्रचुर संम्भावनाएँ हैं। विभिन्न सर्वेक्षणों में पाया गया है कि अभी तक बीजू पौधों के देशी बाग काफी प्रचलित हैं। इन्हें उन्नत किस्मों जैसे इलाहाबाद सफेदा, सरदार, ललित, श्वेता इत्यादि से टाप वर्किंग कर सुधारा जा सकता है। अमरूद उत्पादन की नवीनतम तकनीक को भी बागवानों द्वारा अपनाना होगा जिससे अच्छी गुणवत्ता वाले फल का उत्पादन बढ़ाया जा सकेगा।

सक्षम विपणन द्वारा भी अमरूद की उपलब्धता बढ़ाई जा सकेगी। इससे बागवानों की आमदनी में भी बढ़ोत्तरी होगी। साथ ही बाजार व्यवस्था में अमरूद के फलों की क्षति को भी कम करने के प्रयास होने चाहिये। परन्तु इस व्यवस्था में क्षति के प्रमाणित आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं। अतः इस पत्र में इन्हें संग्रहीत करने का प्रयास किया गया है। साथ ही अमरूद की बाजार व्यवस्था की संरचना एवं मूल्य विस्तार का भी अध्ययन किया गया है।

## बाजार की संरचना एवं मूल्य विस्तार

उत्पादक से उपभोक्ता तक उत्पाद के संचलन में बिचौलिये महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जिसके लिये वो अपने श्रम का मूल्य कमीशन के रूप में प्राप्त करते हैं। उपभोक्ता द्वारा दिये मूल्य तथा उत्पादक द्वारा प्राप्त मूल्य के अन्तर को मूल्य विस्तार की संज्ञा दी जाती है। इनमें विभिन्न बिचौलियों जैसे आढ़तियों आदि का कमीशन अथवा मार्जिन तथा उनकी लागत शामिल है। बाजार की संरचना एवं मूल्य विस्तार का अध्ययन महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे बाजार व्यवस्था की दक्षता का मूल्यांकन किया जा सकता है।

अमरूद बाजार व्यवस्था में मुख्यतः निम्नलिखित तीन प्रणालियाँ पायी जाती है।

(1) बागवान-उपभोक्ता।

(2) बागवान-आढ़तिया/थोक व्यापारी -फुटकर विक्रेता-उपभोक्ता।

(3) बागवान- तुड़ाई पूर्व ठेकेदार -आढ़तिया/ थोक व्यापारी -फुटकर विक्रेता-उपभोक्ता।

प्रथम प्रणाली व्यावहारिक नहीं है क्योंकि इसके माध्यम से बागवान उत्पाद को दूरस्थ उपभोक्ता तक नहीं पहुँचा सकते हैं। इसके माध्यम से मात्र 7 प्रतिशत अमरूद का विपणन पाया गया है। द्वितीय प्रणाली का उपयोग 24 प्रतिशत बागवानों ने किया। इस प्रणाली में बागवान उत्पादन कर खुद ही विपणन करते हैं। तृतीय प्रणाली को सबसे अधिक 69 प्रतिशत बागवानों ने प्रयोग किया। इस प्रणाली में बाग तुड़ाई पूर्व ठेकेदार को एक से तीन साल के लिए ठेके पर दे दिया जाता है। यह तुड़ाई पूर्व ठेकेदार ही फल का उत्पादन कर उसका विपणन करता है। मूल्य विस्तार के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि प्रथम प्रणाली में उपभोक्ता द्वारा प्रदत्त मूल्य का सर्वाधिक, अर्थात 99 प्रतिशत बागवान को प्राप्त हुआ, परन्तु यह प्रणाली समस्त फल के विपणन में नहीं लायी जा सकती है (सारणी-1)। द्वितीय प्रणाली में उपभोक्ता द्वारा प्रदत्त मूल्य का लगभग 37 प्रतिशत ही बागवान को प्राप्त हुआ तथा लगभग 52 प्रतिशत बिचौलियों का मार्जिन पाया गया। शेष राशि विपणन की लागत के रूप में आँकी गयी। तृतीय प्रणाली में मात्र 17 प्रतिशत ही बागवान का अंश था तथा 71 प्रतिशत बिचौलियों का इसमें तुड़ाई पूर्व ठेकेदार का भी अंश था तथा लगभग 12 प्रतिशत विपणन लागत आँकी गयी। उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि बागवान को अपनी उपज का सर्वाधिक मूल्य स्वयं विपणन से प्राप्त हुआ न कि तुड़ाई पूर्व ठेकेदार द्वारा, विपणन से बागवान द्वारा फसल का स्वयं विपणन नहीं करने का मुख्य कारण उत्पादन एवं मूल्य जोखिम पाया गया। उत्पादन जोखिम मुख्यतः उत्पादन के अनावश्यक उतार-चढ़ाव के कारण उत्पन्न होता है जो वर्ष विशेष में प्रतिकूल मौसम, कीटों के प्रकोप अथवा भूस्वामी द्वारा स्वयं खेती न करने की प्रवृति इत्यादि की वजह से होता है। मूल्य जोखिम मूल्यों के अनावश्यक उतार चढ़ाव के कारण होता है। अतः आवश्यक है कि बागवानों में जोखिम उठाने की क्षमता का विकास किया जाये जिससे उन्हें अपने उत्पादन का समुचित मूल्य प्राप्त हो सके।

## अमरूद की तुड़ाई उपरान्त व्यवस्था में क्षति

अमरूद इलाहाबाद के क्षेत्र के बागवानों एवं इस फल से जुड़े सभी व्यक्तियों एवं व्यवसाइयों के आय का प्रमुख स्रोत हैं। फिर भी इसका उत्पादन, तुड़ाई एवं रख-रखाव की विधियाँ परम्परागत है, जिसके कारण विपणन व्यवस्था में क्षति पायी जाती है। वैज्ञानिक विधियों द्वारा सक्षम रख-रखाव व्यवस्था से इन क्षतियों को कम किया जा सकता है तथा इसकी उपलब्धता बढ़ायी जा सकती है।

अमरूद के थोक व्यापार के लिए इलाहाबाद क्षेत्र में मुन्डेरा मन्डी प्रमुख है। यहाँ पर अमरूद सैकड़ा के हिसाब से बेचा जाता है जिसमें 20 प्रतिशत अतिरिक्त फल देने की परम्परा है। बागवान

केवल अनौपचारिक रूप से श्रेणीकरण करते हैं जिससे पेटीबंदी करते समय आकर्षक फल ऊपर की तह में तथा अनाकर्षित फल निचली सतहों में स्थापित किये जा सकें। यह श्रेणीकरण मुख्यतः आकार, रंग एवं रूप के अनुसार होता है। इस स्तर पर विभिन्न प्रगाढ़ता के लगभग 3 प्रतिशत फल क्षतिग्रस्त पाये गये। यह मुख्यतः परिवहन के दौरान दबाव के कारण थे। यह क्षति फलों की परिपक्ता पर निर्भर करती है क्योंकि पूर्णरूपेण पके फलों में क्षति और अधिक हो सकती है। फलों की बिकवाली से पूर्व फलों का स्वामित्य नहीं बदला होता है अतः इस स्तर की अधिकतर क्षति बागवान को वहन करनी पड़ती है। सर्वेक्षण के दौरान पाया गया है कि मण्डी में पुनः पैकिंग की जाती है जो निर्दिष्ट मण्डी की दूरी एवं अपेक्षा पर निर्भर करती है। जैसे कि दूरस्थ मण्डियों में हर फल को टिशू पेपर अथवा अखबार में लपेटकर लकड़ी के बक्सों में सजाया जाता है वहीं निकटवर्ती मण्डियों हेतु फलों को छोटे ट्रकों में या तो फर्श पर भर दिया जाता है अथवा अरहर की डलियों में व्यवस्थित किया जाता है।

फुटकर विक्रेता स्तर पर सर्वाधिक क्षति आँकी गयी क्योंकि इस स्तर पर सम्पूर्ण तुड़ाई उपरान्त व्यवस्था का फल एकत्रित होता है। इस स्तर पर सर्वाधिक क्षति फलों के अत्यधिक पकने के कारण पायी गयी है जो कि विभिन्न प्रगाढ़ता में लगभग 3.95 प्रतिशत होती है। इसमें जहाँ 2.47 प्रतिशत फल 10-15 प्रतिशत क्षति की प्रगाढ़ता लिए हुए थे, वहीं 1.48 प्रतिशत फल विक्रय योग्य नहीं पाये गये। इसी प्रकार परिवहन के दौरान दबाव चिह्नों से 3.86 प्रतिशत फल विभिन्न प्रगाढ़ता में क्षतिग्रस्त थे। अधिकतर फल 10 प्रतिशत अथवा 10-15 प्रतिशत दबाव चिह्न की प्रगाढ़ता लिए हुए थे। कुछ फल सड़न से भी प्रभावित थे। विभिन्न प्रगाढ़ता को ध्यान में रखकर कुल संकलित क्षति 4.19 प्रतिशत आँकी गयी। फुटकर विक्रेता का विपणन प्रणाली के अन्तिम स्तर का होने के कारण पूर्व स्तरों से हस्तान्तरित होते हुए। क्षतियों का इस स्तर पर एकत्र हो जाने के कारण अत्याधिक क्षति आँकी गयी। साथ ही फुटकर विक्रेता ने फल को सबसे अधिक समय तक अपने पास रखा। उपभोक्ता भी फल की ताजगी, सुदृढ़ता एवं रूप रंग को देखकर छाँटते वक्त इन फलों को रोग, सड़न एवं कीट मुक्त भी चाहते हैं। इस प्रक्रिया में काफी फलों में दबाव चिहन उत्पन्न हो जाते हैं, तथा नरम पड़ जाते है एवं अतिपरिपक्कता की स्थिति पैदा हो जाती है। इस स्थिति में फुटकर विक्रेता को इन फलों का मूल्य गिराकर विक्रय करना पड़ता है। कभी-कभी बचे हुए स्टॉक को नयी पूर्ति में मिलाकर विक्रय किया जाता है। विभिन्न स्तर की क्षतियों को उपयुक्त भार के रुप में प्रयोग करते हुए एकीकृत करने पर ज्ञात हुआ की समस्त तुड़ाई उपरान्त प्रणाली में केवल 85.52 प्रतिशत फल ही उपभोक्ता तक सुदृढ़ अवस्था में पहुँच पाते हैं।

अमरूद की वर्ष भर उपलब्धता एवं उसमें प्रचुर पौषणिक गुणों के कारण आय एवं पोषण सुरक्षा में यह फल भरपूर योगदान दे सकता है। देश में अमरूद के अर्न्तगत क्षेत्रफल एवं उत्पादन धीमी गति से बढ़ा है। साथ ही विभिन्न राज्यों में इस फल की उत्पादकता की विविधता देखते हुए इसे बढ़ाने की असीम सम्भावनायें हैं। परन्तु इसके लिए बागों में सुधार एवं नवीन उत्पादन एवं रखरखाव तकनीक को अपनाने की अत्यधिक आवश्यकता है।

विपणन व्यवस्था में भी परिवर्तन करते हुए बागों की तुड़ाई पूर्व ठेकेदार को बेचने की व्यवस्था छोड़कर बागवान को स्वयं विपणन करने से आय बढ़ाने में मदद मिलेगी। साथ ही क्षति को कम करने हेतु सुदृढ रखरखाव एवं विपणन प्रणाली में सुधार की आवश्यकता है।

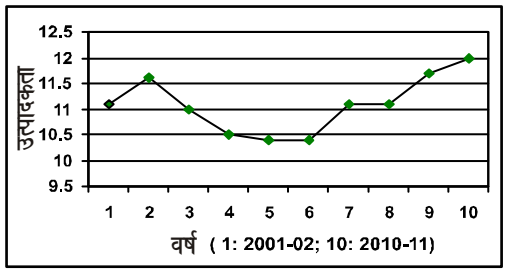


चित्र-1: भारत में अमरूद की उत्तपादकता में वृद्धि

## सारणी-1: अमरूद के विपणन की विभिन्न प्रणालियों में मूल्य विस्तार

| विवरण | प्रणाली-1 | प्रणाली-2 | प्रणाली-3 |
|---|---|---|---|
| 1. कृषक द्वारा प्राप्त शुल्क मूल्य | 98.79 | 36.97 | 17.29 |
| 2. कृषक को विपरण लागत | 1.21 | 3.05 | - |
| 3. उत्पपदक का विक्रय मूल्य | - | 40.02 | 17.29 |
| 4. ठेकेदार की विपणन लागत | - | - | 4.16 |
| 5. ठेकेदार का मार्जिन | - | - | 19.37 |
| 6. ठेकेदार का विक्रय मूल्य/अढतिया थोकव्यापारी का खरीद मूल्य | - | 40.02 | 40.82 |
| 7. अढतिया- थोक व्यापारी की लागत | - | - | - |
| 8. अढतिया थोकव्यापारी का मार्जिन | - | 14.49 | 13.70 |
| 9. अढतिया थोकव्यापारी का विक्रय मूल्य | - | 54.51 | 54.52 |
| 10. रिटेलर की विपणन लागत | - | 7.68 | 7.68 |
| 11. रिटेलर का मार्जिन | - | 37.81 | 37.81 |
| 12. कुल विपणन लागत | 1.21 | 10.73 | 11.84 |
| 13. कुल विपणन मार्जिन | - | 52.30 | 70.87 |
| 14. उपभोक्ता मूल्य | 100.00 | 100.00 | 100.00 |

# अमरूद के उत्पाद एवं प्रसंस्करण

डी. के. टंडन[1] एवं डी. के. शुक्ला[2]
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अमरूद भारत में उत्पादित होने वाले सुस्वादु फलों में एक है। व्यापक मात्रा में उपलब्ध भीनी सुगन्ध एवं उच्च पोषक गुणों वाला होने के कारण अमरूद को 'साधारण आदमी के सेब' की संज्ञा भी दी जाती है। अमरूद की पैदावार भारत के लगभग सभी राज्यों में अलग-अलग समय में होती है। उत्तर भारत में अमरूद की मुख्य फसल शीत ऋतु के दौरान पैदा होती है जबकि वर्षा ऋतु में भी इसकी एक अन्य फसल होती है। शीत ऋतु में उत्पादित होने वाली फसल तुलनात्मक रुप से ज्यादा उत्तम स्वाद, सुवास एवं पोषण के कारण वर्षा ऋतु की फसल से बेहतर होती है। वर्षा ऋतु में पैदा होने वाले अमरूद के फलों में फीकापन तथा सुवास का अभाव पाया जाता है। ताजे फलों तथा संसाधित पदार्थों के रूप में अमरूद की होने वाली उच्च खपत के कारण यह भारत की एक अग्रणी व्यावसायिक फसल है। इसकी विशेषता है कि इससे कम लागत में भी उच्च लाभ प्राप्त होता है। भारत में पैदा की जाने वाली अमरूद की मुख्य किस्में इलाहाबाद सफेदा तथा सरदार (एल-49) हैं। इसके अतिरिक्त नागपुर सीडलेस, धारवार, चित्तीदार, एपिल कलर, पंत प्रभात, अर्का मृदुला, अर्का अमूल्या, इलाहाबाद सुर्खा आदि प्रचलित प्रजातियाँ हैं। रेड फ्लेशड तथा ललित जैसी लाल गूदे वाली प्रजातियों की उपलब्धता काफी सीमित है।

भारत में कुल फलों का उत्पादन लगभग 748.78 लाख टन [illegible] है। इतने वृहत स्तर पर फल उत्पादन के बावजूद देश में प्रसंस्करण का स्तर अत्यन्त निम्न है। यहाँ औद्यानिक फसलों का केवल 2.2 प्रतिशत भाग ही संसाधित किया जाता है जबकि मलेशिया, फिलिपीन्स तथा ब्राजील जैसे विकासशील देशों में यह क्रमशः 83, 78 तथा 70 प्रतिशत है। अतः देश में प्रसंस्करण स्तर को बढ़ाने की अच्छी सम्भावनाएँ विद्यमान हैं। प्रसंस्करण के निम्न स्तर के पीछे कम घरेलू माँग एक महत्वपूर्ण कारण है क्योंकि भारतीय ताजे फल खाना अधिक पसंद करते हैं तथा साथ ही प्रसंस्कृत उत्पादों का मूल्य अधिक होने के कारण यह समाज के उच्च आमदनी वाले वर्ग तक ही अधिकांशतः सीमित है। विकसित देशों में ताजे फल एवं प्रसंस्कृत पदार्थ के मूल्यों में कोई विशेष अंतर न होने के कारण प्रसंस्कृत पदार्थ की मॉंग ज्यादा रही है। इसके अतिरिक्त संसाधित पदार्थों की गुणवत्ता तथा स्वास्थ्यवर्द्धक तत्व बहुधा उपभोक्ताओं को संतुष्ट नहीं कर पाते हैं जिससे उनकी माँग तथा उत्पादन प्रभावित होता है। यद्यपि विगत कुछेक वर्षों में आर. टी.एस. पेय, सान्द्र पेय, जूस, अचार, सूखे तथा हिमित पदार्थों के उत्पादन में घनात्मक वृद्धि हुई है जिसके पीछे लोगों की क्रय क्षमता में वृद्धि, प्रसंस्कृत

[1]प्रधान वैज्ञानिक एवं [2]तकनीकी अधिकारी

पदार्थों में विस्तार, गुणवत्ता में सुधार, उचित मूल्य आदि काफी प्रभावशाली कारक हैं। खाद्य उद्योग में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का आगमन तथा उत्पादों का व्यापक प्रचार भी प्रसंस्करण क्षेत्र को बढ़ाने में काफी महत्वपूर्ण रहा है।

## पोषक तत्व

अमरूद में लगभग 20 प्रतिशत छिलका, 50 प्रतिशत गूदा तथा 30 प्रतिशत बीज का भाग होता है। इसमें 87 प्रतिशत नमी, 0.8-1.5 प्रतिशत प्रोटीन, 0.4-0.7 प्रतिशत वसा तथा 0.5-1.0 प्रतिशत राख होती है। कार्बोहाइड्रेट अमरूद का एक मुख्य संघटक है, जिसमें 6-11 प्रतिशत शर्करा सम्मिलित है। अमरूद अपनी उच्च कोटि की पेक्टिन के लिए जाना जाता है, जोकि 0.5-2.8 प्रतिशत की मात्रा में मौजूद होती है। यह विटामिन-सी का एक बहुत अच्छा स्रोत है। अमरूद में 500 मि. ग्रा. प्रति 100 ग्राम तक विटामिन सी पाया जाता है। अन्य विटामिन जैसे नियासिन, थायमिन एवं रिबोफ्लेविन भी उचित मात्रा में विद्यमान रहते हैं। अमरूद के फलों में खनिज विशेषकर लौह, कैल्सियम एवं फासफोरस प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहते हैं। लाल गूदे वाली अमरूद की प्रजातियों में लाइकोपीन नामक वर्ण पदार्थ पाया जाता है।

## उत्पाद

अल्पतम प्रसंस्करण के अन्तर्गत अमरूद को बगैर छीले अथवा छीलकर तथा बीजयुक्त भाग हटाकर दो या चार टुकड़ों में काट लिया जाता है तथा उन्हें कोई पूर्व उपचार देकर पॉलीथीन के थैलों अथवा पॉलीस्टीरीन के डिब्बों में पैक कर 5-100 से.ग्रे. पर भंडारित किया जाता है।

गूदा बनाने हेतु अमरूद को टुकड़ों में काटकर पल्पर की सहायता से पीसकर तथा छानकर बीजरहित कर लिया जाता है। पिसे गूदे में लगभग 20 प्रतिशत पानी मिलाकर 800 से.ग्रे. तक गर्म करते हैं। तत्पश्चात उसमें 1000 पी.पी.एम. सल्फर डाईऑक्साइड, पोटैशियम मेटाबाईसल्फाइट के रूप में मिलाते हैं। लाल गूदे वाली प्रजातियों में पोटैशियम में टाबाईसल्फाइट के स्थान पर पोटैशियम मेटाबाईसल्फाइट तथा सोडियम बेन्जोएट का मिश्रण (500 पी.पी.एम. प्रत्येक) का प्रयोग करते हैं। उक्त गूदे को पूर्व निर्जर्मीकृत हवा अवरोधी बर्तनों में भरकर अच्छी प्रकार बंद कर देते हैं तथा ठंडे एवं शुष्क स्थान पर भंडारण करते हैं। अमरूद के गूदे को बिना कोई रसायनिक उपचार दिये टिन के डिब्बों में भरकर हिमित ताप पर भी भंडारित किया जा सकता है। परिरक्षित गूदे का प्रयोग पेय, जैम, पापड़, पाउडर आदि बनाने में किया जा सकता है।

पेय बनाने हेतु 15 प्रतिशत अमरूद का गूदा, 14 प्रतिशत चीनी एवं 0.25 प्रतिशत अम्ल का प्रयोग होता है। पहले चीनी को पानी में घोलकर छान लिया जाता है। तत्पश्चात् छने घोल को गूदे में मिलाकर $95^0$ से. ग्रे. तापमान तक गर्म किया जाता है। गर्म होने के पश्चात् इसमें साइट्रिक अम्ल थोड़े से पानी में घोलकर मिलाते हैं तथा गर्म पेय को निर्जमीकृत काँच की बोतलों में भरकर सील कर देते हैं। अन्त में भरी हुई बोतलों को खौलते पानी में 20 मिनट तक उबालकर ठंडा करते हैं तथा शुष्क एवं ठंडे स्थान पर भंडारित करते हैं। ताजे गूदे से पेय

बनाने में 70 पी.पी.एम. सल्फर डाईऑक्साइड का प्रयोग करना चाहिये। मिश्रित पेय बनाने हेतु अमरूद में अनन्नास, आँवले, अनार, बेर, नाशपाती, पपीते, जामुन आदि का रस भी मिलाया जा सकता है।

जैम हेतु अमरूद के गूदे में समान मात्रा में चीनी तथा 0.4 प्रतिशत अम्ल मिलाकर आँच पर तब तक गर्म करते हैं जब तक कि मिश्रण की कुल घुलनशील ठोस मात्रा 68° ब्रिक्स नहीं हो जाये।

जैली बनाने हेतु अमरूद की पतली-पतली फाँकों को बराबर मात्रा में पानी, जिसमें 0.1 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल मिला होता है, के साथ 30-45 मिनट तक उबालकर प्राप्त मिश्रण को छान लेते हैं। इस मिश्रण में 500-750 ग्राम चीनी तथा 6-7 ग्राम साइट्रिक अम्ल प्रति लीटर मिलाकर 105.50 से.ग्रे. तापमान तक गर्म करते हैं अथवा शीट टेस्ट द्वारा इसका परीक्षण कर लिया जाता है। आँच से उतारकर मिश्रण को साफ बोतलों में भर लेते हैं। ठंडा होने पर जैली तैयार हो जाती है।

अमरूद की चीज के लिये गूदे में 1-1.25 कि.ग्रा. चीनी, 1.5-3.0 ग्राम साइट्रिक अम्ल, 50-60 ग्राम मक्खन तथा लगभग 2 ग्राम नमक प्रति कि.ग्रा. गूदे के हिसाब से मिलाकर मिश्रण को गाढ़ा होने तक गर्म करते हैं। तत्पश्चात चिकनाईयुक्त ट्रे में फैलाकर सुखा लेते हैं तथा जमे हुए चीज को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर मोमी कागज में लपेट लेते हैं।

डिब्बाबंदी हेतु फलों के टुकड़ों को पहले 2 प्रतिशत नमक के घोल में 5-10 मिनट तक उपचारित करते हैं फिर उन्हें 40 प्रतिशत चीनी एवं 0.25 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल के घोल में रखकर डिब्बाबंदी करते हैं।

सूखी फाँकों हेतु अमरूद की फाँकों/कतलों को उबलते हुए 60-70 प्रतिशत चीनी के घोल, (0.3 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल तथा 0.2 प्रतिशत पोटैशियम मेटाबाईसल्फाइट मिला होता है) में 3 मिनट तक डुबोते हैं फिर इसी घोल में रात भर के लिए छोड़ देते हैं। फाँकों को निकालकर 60° से.ग्रे. पर डिहाईड्रेटर में तब तक सुखाते हैं जब तक कि उनमें 10-15 प्रतिशत तक नमी रह जाये। इसी प्रकार अमरूद के गूदे को सुखाकर तथा पीसकर पाउडर प्राप्त किया जा सकता है। हालाँकि दरदरेपन की वजह से इसका उपयोग सीमित होता है। उत्तम किस्म का पाउडर स्प्रे-ड्रांइग तकनीक द्वारा प्राप्त किया जा सकता है जो आइसक्रीम, चाकलेट तथा मिठाई उद्योग में प्रयुक्त हो सकता है।

## समस्याएँ

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, भारत में ताजे फल एवं सब्जियों का प्रसंस्करण काफी कम है। इस निम्न स्तर के प्रसंस्करण के लिए कई कारक उत्तरदायी हैं जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण कारक निम्न हैं।

1. गुणवत्तायुक्त कच्चे माल की अनुपलब्धता।
2. उत्पादों की अस्थिर गुणवत्ता।
3. आधारभूत सुविधाओं जैसे जल, बिजली, सड़कों का अभाव।
4. प्रसंस्करण इकाईयों का क्षमता से कम उपयोग।
5. प्रसंस्कृत उत्पादों की कम माँग।

## गुणवत्ता नियमीकरण

भारत में ज्यादातर खाद्य प्रसंस्करण इकाईयाँ असंगठित क्षेत्र में स्थित हैं जहाँ पर आधुनिक प्रसंस्करण उपकरणों तथा उन्नत तकनीकी जानकारियों के बारे में जागरूकता का अभाव है। इन्हीं कारणों से उत्पादों की गुणवत्ता अक्सर निम्न स्तर की तथा अस्थिर होती है। यह अक्सर भारतीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप नहीं होती हैं। इसके अतिरिक्त आयात करने वाले देश कड़े गुणवत्ता नियंत्रक कानूनों को प्रयोग करतें हैं जो व्यापारिक अवसरों को काफी सीमित कर देते हैं। अलग-अलग देशों के अलग-अलग उत्पाद प्राथमिकताएँ तथा गुणवत्ता मानक हैं। इस प्रकार की सूचनाओं का भारतीय प्रसंस्करण उद्योग में अक्सर अभाव होता है अथवा उन पर ध्यान नहीं दिया जाता है। इन्हीं कारणों से भारतीय उत्पादों का निर्यात काफी प्रभावित होता है। अतः आज यह आवश्यक हो गया है कि उत्पाद निर्माण के समय मानकों का ठीक प्रकार ध्यान रखा जाये। विश्व व्यापार संगठन (डब्लू.टी.ओ.) ने सेनीटरी तथा फाइटोसेनेटरी (एस.पी.एस.) संधि के अंतर्गत कुछ न्यूनतम मानक बनाये हैं जिनका अनुपालन सभी सदस्य देशों को करना आवश्यक है। कुछ ऐसे संगठन हैं जो कि इन मानकों को बनाने तथा इनका परिपालन कराने हेतु काफी प्रयत्नशील हैं जैसे- भारतीय मानक ब्यूरो, खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय, निर्यात निरीक्षण परिषद तथा *कोडेक्स एलीमेन्टेरियस*। *कोडेक्स एलीमेन्टेरियस* द्वारा बनाये गए मानक पूरे विश्व में प्रचलित हैं, अतः इनका उपयोग घरेलू संगठनों में एक 'बेन्चमार्क' की तरह हो रहा है। वर्तमान में भारतीय खाद्य संस्था एवं मानक प्राधिकरण अधिनियम लागू किया है जिनके अंतर्गत सभी प्रकार की खाद्य इकाईयों को पंजीकरण कराना होगा।

# अमरूद का किण्वित पेय

नीलिमा गर्ग[1]

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अमरूद मूल रूप से ऊष्ण कटिबंधीय अमेरिका का फल है जो भारतीय जलवायु में भी खूब फलता-फूलता है। यही कारण है कि भारत में आम, सन्तरा, केला और सेब के पश्चात क्षेत्रफल और उत्पादन की दृष्टि से इसका पाँचवां स्थान है। भारत में इसका कुल उत्पादन क्षेत्रफल 20.5 लाख हेक्टेयर तथा उत्पादन 24.62 लाख मीट्रिक टन [illegible]. 11 है। अमरूद के प्रमुख उत्पादक प्रदेशों में बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र तथा आंध्र प्रदेश हैं।

अमरूद विटामिन-सी का एक प्राकृतिक स्रोत है तथा किसी अन्य रसीले फल जैसे-संतरा की अपेक्षा इसमें 4 से 10 गुणा अधिक विटामिन-सी पाया जाता है। अमरूद को मुख्यतया जैली, जैम, गूदा, सांध्रित रस, चीज, टॉफी तथा अन्य सूखे या डिब्बा बंद उत्पादों में प्रसंस्कृत किया जाता है। किन्तु जैली एवं पेय के अतिरिक्त अन्य उत्पादों की लोकप्रियता काफी कम है। इसलिये नये अमरूद उत्पाद बनाने की अधिक आवश्यकता है।

किण्वित फल पेय पोषक, पाच्य, ताजगीयुक्त तथा स्फूर्तिदायक होते हैं। सेब का साइडर एक लोकप्रिय, कम एल्कोहलयुक्त (3-7%) पेय है जो विदेशों में काफी प्रचलित है। सेब के अतिरिक्त नाशपाती, आड़ू, आँवला तथा रसभरी से भी साइडर बनाया जा सकता है। भारत में अमरूद के अच्छे उत्पादन को देखते हुए अमरूद साइडर प्रसंस्करण उद्योग में एक नया उत्पाद बन सकता है। किन्तु अभी तक इस दिशा में ठोस कदम नहीं उठाया गया है। संस्थान में अमरूद से स्वादिष्ट, पौष्टिक एवं कम एल्कोहलयुक्त किण्वित पेय विकसित किया गया है जिसकी बाजार में ग्राह्यता की काफी संभावनाएँ हैं।

वैसे तो इलाहाबाद सफेदा तथा सरदार अमरूद की प्रमुख प्रजातियाँ है किन्तु अन्य कम प्रचलित, खट्टी, कम पेक्टिनयुक्त प्रजातियाँ भी साइडर बनाने हेतु प्रयोग की जा सकती हैं।

साइडर बनाने हेतु अमरूद को काटकर उसका गूदा बना लिया जाता है। तनु किये गये छने गूदे में शर्करा तथा अम्लता की मात्रा इच्छित स्तर पर लायी जाती है। तत्पश्चात सल्फाईटेशन द्वारा इस गूदे को निर्जर्मीकृत किया जाता है। फिर इसमें यीस्ट (*सैकेरोमाइसीज सेरेविसी*) डालकर किण्वन प्रक्रिया के लिये 200 से.ग्रे. पर रख दिया जाता है। निश्चित अवधि के बाद ऊपर आये साफ द्रव को साइफन विधि से दूसरे बर्तन में निकाल लिया जाता है जिसमें किण्वन लॉक लगाकर एक महीने तक रखा जाता है। एक महीने के पश्चात किण्वित साइडर साइफन

[1]प्रभागाध्यक्ष (तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन)

प्रक्रिया द्वारा अलग कर फिर से दूसरे बर्तन में डाला जाता है तथा परिपक्वीकरण हेतु डेढ़ से तीन महीने के लिये रख दिया जाता है। तत्पश्चात साइडर की बोतलबंदी की जाती है।

किण्वन प्रक्रिया के तदुपरान्त साइडर को बिना किसी खराबी के एक वर्ष तक रखा जा सकता है। तैयार साइडर में विटामिन-सी की मात्रा 33 मि.ग्रा. प्रति सौ मि.ली. होती है। एच.पी.एल. सी. के प्रयोग से अमरूद के साइडर में फिनॉल्कि तत्वों जैसे-गैलिक एसिड, सिरिन्जेल्डिहाइड, कैफीक एसिड और सिन्नेमिक एसिड होने की पुष्टि हुई है जिनकी कैन्सर रोधी गुण सर्वविदित है। अमरूद के गूदे का गुलाबी रंग एल्कोहल में अविलेय होता है क्योंकि यह किण्वन प्रक्रिया के दौरान बर्तन में नीचे बैठ जाता है और साइडर में नहीं आता है।

परिणाम के आधार पर यह निर्धारित किया गया कि अमरूद की स्थानीय अम्लीय प्रजातियों से निर्मित साइडर भी अच्छा होता है क्योंकि इसमें चीनी और अम्ल का सही मिश्रण होता है तथा इसमें अमरूद की सुगंध भी काफी प्रबल होती है। प्रचलित प्रजातियों में पाये जाने वाले अमरूदों में ललित ने इलाहाबाद सफेदा और सरदार से उच्च स्थान प्राप्त किया है।